जिनभाषित

वीर निर्वाण सं. 2529

भगवान् आदिनाथ चाँदखेड़ी

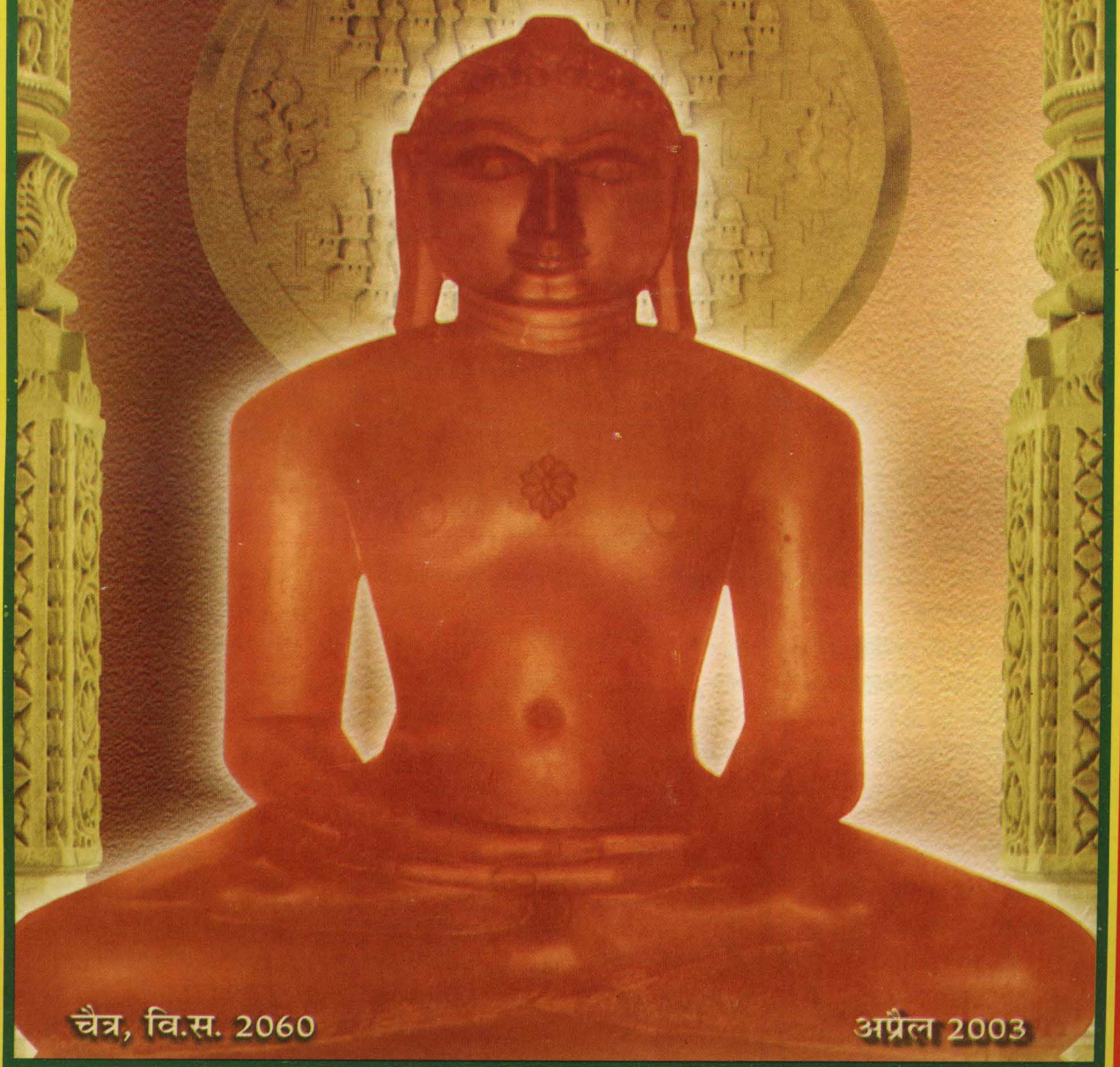

चैत्र, वि.स. 2060 अप्रैल 2003

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रजि. नं. UP/HIN/29933/24/1/2001-TC डाक पंजीयन क्र.-म.प्र./भोपाल/588/2003

जिनभाषित

मासिक

अप्रैल 2003

वर्ष 2, अङ्क 3

सम्पादक
प्रो. रतनचन्द्र जैन

कार्यालय
ए/2, मानसरोवर, शाहपुरा
भोपाल- 462016 (म.प्र.)
फोन नं. 0755-2424666

सहयोगी सम्पादक
पं. मूलचन्द्र लुहाड़िया, मदनगंज किशनगढ़
पं. रतनलाल बैनाड़ा, आगरा
डॉ. शीतलचन्द्र जैन, जयपुर
डॉ. श्रेयांस कुमार जैन, बड़ौत
प्रो. वृषभ प्रसाद जैन, लखनऊ
डॉ. सुरेन्द्र जैन 'भारती', बुरहानपुर

शिरोमणि संरक्षक
श्री रतनलाल कँवरीलाल पाटनी
(मे. आर.के.मार्बल्स लि.)
किशनगढ़ (राज.)
श्री गणेश कुमार राणा, जयपुर

द्रव्य-औदार्य
श्री गणेश कुमार राणा
जयपुर

प्रकाशक
सर्वोदय जैन विद्यापीठ
1/205, प्रोफेसर्स कॉलोनी,
आगरा-282002 (उ.प्र.)
फोन : 0562-351428, 352278

सदस्यता शुल्क

शिरोमणि संरक्षक	5,00,000 रु.
परम संरक्षक	51,000 रु.
संरक्षक	5,000 रु.
आजीवन	500 रु.
वार्षिक	100 रु.
एक प्रति	10 रु.

सदस्यता शुल्क प्रकाशक को भेजें।

अन्तस्तत्त्व

पृष्ठ

- **आपके पत्र : धन्यवाद** 1
- **सम्पादकीय** : यह कैसा धर्म संरक्षण? 3
- **प्रवचन:** विनयावनति : आचार्य श्री विद्यासागर जी 8
- **लेख**
  - कार्यकारण-व्यवस्था : मुनि श्री निर्णयसागर जी 10
  - जिनदीक्षा का पात्र कौन? : मुनि श्री विशुद्धसागर जी 12
  - अज्ञाननिवृत्ति : पं.माणिकचन्द जैन न्यायाचार्य 15
  - सम्यक्चारित्र की उपादेयता : डॉ. श्रेयांस कुमार जैन 16
  - सम्यक्त्वमणि: रानी रेवती : डॉ. नीलम जैन 18
  - चाँदखेड़ी के अतिशय क्षेत्र से... : सतीश जैन इंजीनियर 20
  - संयुक्त परिवार का अर्थशास्त्र : श्री प्रमोद शर्मा (सी.ए.) 23
- **जिज्ञासा-समाधान** : पं. रतनलाल बैनाड़ा 24
- **आ.श्री विद्यासागर जी की पूजा** : राजेन्द्र रमण 26
- **कविताएँ :**
  - भक्ति जिनने जोड़ ली है : योगेन्द्र दिवाकर 25
  - मेरी कविताएँ : डॉ. सुरेन्द्र जैन भारती 27
  - भगवान महावीर का गर्भावतरण : देवेन्द्रकुमार जैन आवरण पृष्ठ 4
- **बोध कथाएँ**
  - दया की पुकार : डॉ. कस्तूरचन्द्र जैन 'सुमन' 11
  - मेरी कविताएँ : डॉ. सुरेन्द्र जैन भारती 4
  - चावल के पाँच दाने : डॉ.जगदीशचन्द्र जैन

  आवरण पृष्ठ 3
- **समाचार** 28-32

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आपके पत्र, धन्यवाद : सुझाव शिरोधार्य

मैं ''जिनभाषित'' पत्रिका का प्रारम्भ काल से ही नियमित पाठक रहा हूँ। यह पत्रिका समाज को दिशा देने के साथ-साथ युवा वर्ग को भी अपने धर्म व गुरुओं की जानकारी उपलब्ध कराकर उन्हें जिन धर्म को जानने समझने की जानकारी उपलब्ध करा रही है।

फरवरी २००३ के अंक में परमपूज्य मुनि श्री प्रमाण सागर जी महाराज का लेख 'धर्म-जीवन की धुरी' वास्तव में धर्म की आत्मा से स्वयं की आत्मा को अंगीकार करने वाला लेख है।

मेरी दृष्टि बचपन से एक स्वच्छ आलोचक की रही है। इस कारण मुझे कमियाँ स्वत: ही नजर आ जाती हैं। मैं आपकी पत्रिका में कमियाँ न देखते हुये एक सुझाव जरूर देना चाहूँगा। मैंने जिनभाषित के प्रत्येक अंक में आवरण सज्जा सर्वोत्तम देखी है आवरण पृष्ठ के चित्र को देखकर उसके बारे में जानने की इच्छा स्वत: ही हो जाती है। इस दृष्टि से आपसे विनम्र अनुरोध है कि आप कृपया अपने जिनभाषित के आगामी अंक में उक्त कमी को दूर करने का प्रयास करेंगे एवं मेरे सुझाव को पत्रिका में स्थान देंगे।

जिनेन्द्र घुवारा
घुवारा सदन, टीकमगढ़ (म.प्र.)

आपके कुशल संपादन से सज्जित पत्रिका जिनभाषित का प्रत्येक अंक पठनीय/मननीय एवं संग्रहणीय है।

आपके द्वारा लिखा संपादकीय एवं श्री जुगलकिशोर मुख्तार के लेख चेतना को हिला कर झकझोर देते हैं और सोचने को मजबूर कर देते हैं। कृपया इस तरह के लेख निर्भीकता से छापा करें।

क्योंकि यह सत्य है कि १० सच्चे मुनीश्वर जितनी प्रभावना करते हैं, एक विकृत भाववाला मुनि उतनी अप्रभावना कर देता है।

आजकल एस.टी.डी. फोन के कारण किसी के मरण होने पर रिश्तेदारों के इंतजार में अधिक समय तक मृत शरीर को रखने की परंपरा बढ़ती जा रही है। कृपया इस पर भी पत्रिका के माध्यम से अपनी सलाह देवें कि ऐसा करना ठीक नहीं है और मरण होने पर कितने समय पश्चात् सूक्ष्म जीव उत्पन्न होने लगते हैं इस पर भी पत्रिका में जानकारी मिलनी चाहिए।

जिस भी तीर्थ क्षेत्र की फोटो मुख पृष्ठ पर प्रकाशित की जावे, उसके बारे में विवरण अवश्य ही उसी अंक में दिया जावे।

यदि आप धार्मिक वर्ग पहेली को पत्रिका में स्थान देना चाहते हों, तो कृपया सूचित करें, हम नि:शुल्क वर्ग पहेली बनाकर भेजने के लिए तैयार हैं।

उपेन्द्र नायक, रानीपुरा (झाँसी)

''जिनभाषित'' पत्रिका जनवरी २००३ का अंक देखने-पढ़ने-समझने में आया। पाठकों के पत्रों में पं. सुनील जी शास्त्री, आगरा का पत्र एवं आपका सम्पादकीय निश्चय ही सोचने-विचारने परमजबूर कर देता है। सम्पादकीय के पैराग्राफ नं. ८-११ तथा १२ पर जहाँ आपने बीमारी की ओर दृष्टि की है वहीं आपने इसका कारण क्या है, इस पर भी जोर दिया है। वास्तव में आर्यिकाएँ आदि मुनिसंघों के साथ रहनी ही नहीं चाहिये।

१०८ मुनिश्री निर्णयसागर जी ने ''प्रतिमा विज्ञान और उसके लाभ'' में जो समाधान दिये हैं वे समाधान-कारक हुए हैं। अन्य लेख भी पठनीय हैं अच्छी पत्रिका के लिये धन्यवाद।

पं. तेजकुमार गंगवाल
१०/२, रामगंज (जिन्सी) इन्दौर-४५२००२

आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के श्रीमुख से कहे प्रेरक वचनों यथा ''बार्डर पर आर्डर की प्रतीक्षा करने वाले जवान भी धर्मज्ञानी हैं, उन्हें भी देशरक्षार्थ धर्म लाभ मिलता है, ऐसे वीर सपूतों का बलिदान राष्ट्र, प्रदेश तथा समाज को याद रखना चाहिए एवं उनके प्रति सद्भावना एवं कृतज्ञता ज्ञापित करनी चाहिए।'' ऐसे अमृतवचन सुनकर हमारे मित्र श्री वीरेन्द्र गाँधी जिनके वीरपुत्र केप्टिन श्रेयांस गाँधी जो अल्प आयु २६ वर्ष में ही देशरक्षा करते हुए रंजीतपुरा सेक्टर बीकानेर राजस्थान सीमापर विगत ०७ जनरवरी को बारूदी सुरंग हटाते हुए शहीद हुए हैं, उनके परिजन एवं मित्र आचार्यश्री के स्नेहाशीष से धन्य हुए हैं। भारतीय सेना में प्रथम सबक के रूप में पढ़ाया जाता है कि-

''If we Don't come Back, tell them, for their better Tomarrow we gave our today.''

देश पर मर मिटनेवाले सपूतों की याद में किसी शायर ने कहा है-

शहीदों की चिताओं पर लगेंगे हर बरस मेले।
वतन पर मिटने वालों का यही बाकी निशाँ होगा॥

आचार्यश्री के अमृत वचनों से, आत्मीयता एवं शीतलता से हम सभी परिजन/मित्रजन अभिभूत हैं। हम प्रार्थना करते हैं कि दिवंगत आत्मा को शान्ति प्राप्त हो। परमपूज्य आचार्य श्री विद्यासागर जी के चरणों में वारंवार वंदना।.

एस.एन. जैन,
पारिवारिक मित्र, अपेक्स बैंक, भोपाल

''जिनभाषित'' फरवरी ०३ अंक प्राप्त हुआ। पत्रिका अपने प्रगति पथ पर निर्बाध गति से बढ़ती हुई लोकप्रियता के चरम का स्पर्श कर रही है। इसमें प्रकाशित समस्त लेख अपने आप में चिन्तनीय, अनुकरणीय एवं समसामयिक होते हैं।

'जिनभाषित' का प्रत्येक अंक हर समय प्रासांगिक रहने

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वाले लेखों का पिटारा है, जो संग्रहणीय होता है। यह ऐसी पत्रिका है, जिसमें अभी तक किसी प्रकार का दूषण नहीं आ पाया है। यह संपादक के कौशल का परिणाम है। इसमें पक्षपात का कीड़ा नहीं लगा है, जिससे इसका प्रगति पथ निर्दोष, सहज, सरल एवं व्यवस्थित है।

'जिनभाषित' जिनेन्द्र की दिव्यध्वनि भव्य जीवों तक पहुँचाने का कार्य चिरकाल तक करती रहे, ऐसी भावना है।

पं. सनत कुमार, विनोद कुमार जैन
रजवाँस, सागर (म.प्र.)

'जिनभाषित' फरवरी २००३ का अंक मेरी दृष्टि के सामने है। पाठकों के पत्रों, समीक्षा तथा प्रतिवाद आदि को निष्पक्ष भाव से समुचित स्थान दिये जाने की विशेषता से संपादक जी का उदार दृष्टिकोण परिलक्षित हो रहा है।

पृष्ठ सं. ४ पर डॉ. श्री राजेन्द्र कुमार जी बंसल अमलाई वालों के पत्र को पढ़ा। इसमें इन्होंने मेरे लेख की चर्चा करते हुये निम्न प्रकार समीक्षा की है-

''श्री पं. शिवचरन लाल जैन ने 'जिनभाषित' अक्टूबर २००२ पृष्ठ २४ पर यह कथन अवर्णवादी लिखा था, जिसमें डॉ. देवेन्द्र कुमार जी शास्त्री ने जन्माभिषेक प्रकरण में लौकान्तिक देवों द्वारा भी अभिषेक करने का उल्लेख किया था। श्री कटारिया जी के मत के अनुसार लौकान्तिक आदि सभी देव कल्याणकों के सभी समारोहों में जाते हैं। सम्माननीय श्री पं. शिवचरन लाल जी का आरोप स्वत: मिथ्या सिद्ध हो जाता है। दुर्भावनापूर्ण कथन इष्ट नहीं है।''

प्रस्तुत समीक्षा स्वस्थ एवं आगमानुकूल नहीं है। इन्होंने मेरे कथन को अवर्णवादी एवं दुर्भावनापूर्ण उल्लिखित किया है। यद्यपि मैं प्रतिवाद करने का अभ्यासी नहीं हूँ, तथापि आगम की गरिमा का अवमूल्यन करना इष्ट नहीं है। इस दृष्टि से स्पष्टीकरण आवश्यक समझकर दे रहा हूँ।

सर्वप्रथम डॉ. श्री देवेन्द्र कुमार जी शास्त्री के शब्दों का उल्लेख करता हूँ-

''जयजयकार के साथ शत सहस्त्र इन्द्र, माहेन्द्र तथा लौकान्तिक देव, प्रभु का अभिषेक करते हैं।'' (जन्माभिषेक के प्रसंग में, प्राकृत विद्या, जनवरी-जून २००२, पृष्ठ ६८)

प्रस्तुत कथन पर मेरी समीक्षा का वाक्य निम्न है-

''यह कथन आगमविरोधी है। लौकान्तिक देव केवल दीक्षाकल्याणक में ही भगवान् के वैराग्य की प्रशंसा करने आते हैं। यह प्रसिद्ध विषय है।''

मैं समझता हूँ कि भाई बंसल जी ने श्री कटारिया जी के आशय को न समझ कर लौकान्तिक देवों द्वारा भी भगवान् के अभिषेक की पुष्टि की है। उनके सामान्य कथन में वे लौकान्तिक देवों को भी सम्मिलित कर रहे हैं। यह उचित नहीं है। उन्हें स्वयं आगम के अवर्णवाद का भय होना चाहिये।

लौकान्तिक देवों द्वारा भी अभिषेक करने की आगम विरोधी सिद्धि के निरसन रूप मेरे कथन को अवर्णवादी एवं दुर्भावनापूर्ण कहना स्वयं बंसल जी की सद्भावना का परिचायक नहीं हो सकता। वे बौद्धिक कार्यों के अभ्यासी हैं। उनसे मेरा आग्रह है कि अपनी भावना को निर्मल बनाते हुए शास्त्रों का पुन: अवलोकन करें और लौकान्तिक देवों द्वारा जन्माभिषेक करने के कतिपय प्रमाण मुझे एवं समाज को प्रस्तुत करें, ताकि जिसकी भी हो, दुर्भावना एवं अवर्णवादी प्रवृत्ति दूर हो सके। मैं एतदर्थ आभारी रहूँगा।

'जिनभाषित' पत्रिका एवं उसके संपादक की मैं मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करता हूँ। भ्रमों के निवारण हेतु इसका प्रयत्न सराहनीय है।

शिवचरन लाल जैन
सीताराम मार्केट, मैनपुरी (उ.प्र.)

कर्मणां विनियोगेन वियोग: सह बन्धुना।
प्राप्ते तत्रापरं दु:खं शोको यच्छति सन्ततम्॥

अर्थ- कर्मों के अनुसार इष्टजनों के साथ वियोग का अवसर आने पर यदि शोक होता है, तो वह आगे और भी दु:ख देता है।

प्रत्यागम: कृते शोके प्रेतस्य आदि जायते।
ततोऽन्यानपि सङ्गृह्य विदधीत जन: शुचम्॥

अर्थ- यदि शोक करने से मृतक व्यक्ति वापस लौट आता हो, तो दूसरे लोगों को भी इकट्ठाकर शोक करना चाहिए।

पद्मपुराण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्पादकीय

यह कैसा धर्म संरक्षण ?

अखिल भारतवर्षीय दि. जैन महासभा भारत के दिगम्बर जैन समाज की सर्वाधिक प्राचीन प्रतिनिधि संस्था है। दिगम्बर जैन समाज में पूजापद्धति के आधार पर बीस पंथ, तेरा पंथ दो प्रकार की मान्यताएँ प्रचलित थीं, किंतु महासभा के संस्थापकों ने दोनों पक्षों को सभा में प्रतिनिधित्व दिया और पक्षपातरहित नीति अपनाई। महासभा के संस्थापक अध्यक्ष एवं आगे भी अनेक अध्यक्ष एवं पदाधिकारी तेरापंथ विचाराधारा के श्रद्धालु रहे, किंतु उन्होंने महासभा के मंच से उक्तपंथ भेद का विवाद उत्पन्न नहीं होने दिया और पंथपक्षपात से उपर रहते हुए दिगम्बर जैन समाज की एकता और संगठन एवं दिगम्बर जैन धर्म की प्रभावना को महासभा का उद्देश्य बनाया। उन्होंने पूजापद्धतियों के विभेद के कारण समाज में कटुता उत्पन्न नहीं होने दी। इसी प्रकार बीसपंथ विचारधारावाले सज्जन भी महासभा के अध्यक्ष रहे, किंतु उन्होंने भी महासभा की संगठनमूलक नीति का कभी उल्लघंन नहीं किया। लम्बे समय तक दोनों विचारधारा के लोगों ने महासभा को अपना समझा और महासभा के झंडे के नीचे मिलकर समाजहित एवं धर्मप्रभावना के कार्यक्रमों में उत्साहपूर्वक भाग लिया।

किंतु अत्यधिक खेद के साथ लिखना पड़ता है कि गत कुछ वर्षों से महासभा के योग्य अध्यक्ष एवं अन्य पदाधिकारियों द्वारा महासभा की स्थापित रीति-नीति उपेक्षित हो रही है। उन्होंने दिगम्बर जैन धर्म की प्रभावना के महान् व्यापक और उदार उद्देश्यों के लिए स्थापित महासभा को मानों अपनी निजी संस्था बना लिया है और वे महासभा के मंच एवं उसके मुखपत्र का उपयोग अपनी एकपक्षीय विचारधारा के प्रचार एवं पोषण में करने लगे हैं। परिणामस्वरूप समाज को बाँटे जाने के साथ-साथ अब तो हमारे आराध्य देवशास्त्रगुरु को भी बाँटा जा रहा है। महासभा की साधारण सभा और कार्यकारिणी समिति के मंच से समाज में फूट डालने वाले आगमविरुद्ध प्रस्ताव पारित किए जा रहे हैं। अखिल समाज की प्रतिनिधि संस्था के द्वारा अपनी व्यक्तिगत एकपक्षीय विचारधारा का पोषण दुर्भाग्यपूर्ण है।

महासभा के साथ एक पवित्र पद ''धर्म संरक्षिणी'' जुड़ा हुआ है, जो महासभा के पदाधिकारियों के कंधों पर एक महान् नैतिक उत्तरदायित्व डालता है। उन्हें इस बात की सावधानी रखना आवश्यक है कि कहीं उनके किसी कार्य से ''धर्मसंरक्षण'' के स्थान पर धर्म की हानि और महासभा के स्थापित उद्देश्यों का उल्लघंन तो नहीं हो रहा है। दिगम्बर जैन धर्म के मूल सिद्धांत वीतरागता, अहिंसा, अपरिग्रह और अनेकांत हैं, जिनके आधार हमारे सच्चे देव, गुरु और शास्त्र हैं। हमारे देव वीतरागी हैं, गुरु वीतरागी, अहिंसक और अपरिग्रही हैं तथा हमारे शास्त्र अनेकात्मक रूप से उक्त सिद्धांतों के प्ररूपक हैं। जब और जहाँ उक्त सिद्धांत बाधित होते हैं, तब और वहाँ धर्म संरक्षण कैसे संभव हो सकता है?

महासभा के केन्द्र में स्थित इसके वर्तमान सुयोग्य अध्यक्ष नि:सन्देह सामाजिक संगठन एवं धर्मसंरक्षण के लिए चिंतित तो हैं और इसके लिए उनके द्वारा समर्पित रूप से किया जा रहा अथक श्रम निश्चय ही अत्यंत प्रशंसनीय है, किंतु समर्पित भावना होते हुए भी कदाचित् पक्षव्यामोह के कारण एवं अफवाहों और शंकाओं के आधार पर बनाई गई धारणाओं के कारण वे महासभा के व्यापक उद्देश्यों से भटक जाते हैं और लिए गए निर्णयों के दूरगामी विपरीत परिणाम देखने में आते हैं।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के आधार पर कोई भी व्यक्ति किसी आम्नाय या पद्धतिविशेष के समर्थन-विरोध में वीतराग चर्चा के रूप में स्वयं के व्यक्तिगत विचार तो व्यक्तिगत रूप से प्रकट कर सकता है, किन्तु अखिल भारतीय दिगम्बर जैन समाज की प्रतिनिधि संस्था के मंच से किसी एक आम्नाय की किसी मान्यता के समर्थन/विरोध का प्रस्ताव यदि पारित किया जाता है तो यह निश्चय ही अत्यंत आपत्तिजनक है और संस्था की निष्पक्ष एवं संगठनपरक नीति को नष्ट करनेवाला होते हुए समाज को विघटन की ओर ले जानेवाला है।

अभी हम केवल महासभा द्वारा पारित दो प्रस्तावों की चर्चा करना चाहेंगे। पहला उदयपुर में हुए महासभा के साधारण अधिवेशन में पारित प्रस्ताव सं.2 है जो जैन गजट के अंक 106/40 पृष्ठ 5 पर प्रकाशित हुआ है। साधारण सभा में प्रस्ताव पारित करने क पूर्व घटना की पूरी जानकारी प्राप्त करने की जिम्मेदारी कार्यकारिणी समिति की होती है, किंतु सखेद लिखना पड़ता है कि बिना घटना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

की वास्तविक जानकारी प्राप्त किए केवल अफवाहों के आधार पर द्वेषबुद्धि से बिजोलिया क्षेत्र की कमेटी के विरुद्ध ऐसा प्रस्ताव लाया गया है। जब बिजौलिया क्षेत्र की सम्पूर्ण कमेटी द्वारा सर्वसम्मति से उक्त प्रस्ताव में वर्णित असत्य का खंडन हो जाने पर किसी प्रकार की शंका शेष नहीं रहने पर भी पुनः दुर्भावना और दुराग्रह से ग्रसित महासभा ने लखनउ में हुई कार्यकारिणी की बैठक में बिजौलिया कमेटी के प्रस्ताव को दुर्भाग्यपूर्ण बताया है, जो समाचार विस्तार से जैन गजट के अंक 107/10 के पृष्ठ 5 पर प्रकाशित है। इस प्रस्ताव में सर्वाधिक खेदजनक बात तो यह हे कि इसमें आचार्य वर्द्धमान सागर जी के सान्निध्य में स्थापित मूर्तियों को हटाने की असत्य बात को दो बार जोर देकर लिखकर दो साधुओं और उनके श्रद्धालुओं की भावनाओं को भड़काने का अवांछित प्रयास किया गया है। यदि कदाचित् यह घटना सत्य भी होती, तो भी महासभा के पदाधिकारियों का यह कर्तव्य था कि साधारण सभा में ऐसा विघटनकारी प्रस्ताव पारित करने के पहले बिजौलिया कमेटी से मिलकर घटना की पूरी जानकारी प्राप्त करते और समाधन का मार्ग खोजते।

इस प्रस्ताव का दुष्परिणाम तुरंत देखने में आ रहा है कि प्रस्ताव के संबंध में 'जिनभाषित' में अक्टूबर-नवम्बर के अंक में संपादकीय लेख प्रकाशित हुआ। उसके विरोध में जैन गजट 107/5 पृष्ठ 2 पर दो भड़काउ पत्र प्रकाशित हुए और उसके खंडन में मदनगंज-किशनगढ़ की समाज द्वारा पारित प्रस्ताव प्रकाशित हुआ। मन में यदि सद्भावना हो तो सत्य से समाधान प्राप्त हो जाता है, किंतु यह सत्य है कि सत्य भी दुर्भावना का समाधन करने में अशक्त रहता है। सब कुछ देखकर ऐसा लगता है कि बिजौलिया क्षेत्र कमेटी को, जो वस्तुतः क्षेत्र के निर्माण व परिवर्तन-परिवर्द्धन के लिए सक्षम व उत्तरदायी है, एक किनारे रखकर दो साधुओं का आधार लेकर समाज की भावनाओं को भड़काने का अवांछनीय कृत्य किया जा रहा है, जिसका प्रारम्भ महासभा ने अपने मंच से किया है।

एक अन्य प्रस्ताव महासभा की लखनउ में हुई प्रबंधकारिणी समिति की बैठक में पारित प्रस्ताव सं. 2 है जो जैन गजट के अंक 107/10 पृष्ठ 6 पर प्रकाशित है। प्रस्ताव के प्रारंभ में भट्टाकर-परंपरा की प्रशंसा करते हुए कहा गया है कि जैनधर्म के संरक्षण संवर्द्धन, जैन वाङ्मय के संरक्षण, प्रणयन में इस परंपरा का योगदान अभिवंदनीय है। यदि हम भट्टाकर परंपरा के इतिहास का निष्पक्ष सर्वेक्षण करें, तो हम पायेंगे कि वास्तविकता उक्त कथन से सर्वथा विपरीत है। यद्यपि भट्टारक शब्द पूर्व में जैनधर्म के प्रभावक आचार्यो के लिए प्रयुक्त होता था, जिन्होंने अनेक ग्रंथ लिखकर दिगम्बर जैन धर्म की प्रभावना की, तथापि भट्टारक शब्द कालांतर में शिथिलाचारी दिगम्बर मुनियों के लिये प्रयुक्त होते-होते, वस्त्रधनादि-परिग्रह सहित मठाधीश सुविधाभोगी किंतु पीछी धारी एक विशेष वर्ग के लिए रूढ़ हो गया। यहाँ उन्हीं भट्टारकों एवं उन्हीं की परंपरा की चर्चा किया जाना प्रसंग प्राप्त है। समय बीतने के साथ ही भट्टारक वर्ग चारित्र में अधिकाधिक शिथिल होता गया और श्रावकों से बलात् भेंट वसूल कर अपना परिग्रह बढाने लगा। चौदहवीं शताब्दी में दिल्ली की गद्दी से प्रारंभ होकर धीरे-धीरे सम्पूर्ण भारत में भट्टारकों की गादियाँ स्थापित हो गईं। इन भट्टारकों ने अपने अस्तित्व के लिए श्रावकों को शास्त्राध्ययन से वंचित रखा और अपनी मंत्र-तंत्रादि शक्ति से प्रभावित रखा। वे भट्टारक स्वयं भी प्रायः आगमज्ञान से शून्य रहते हुए मंत्रतंत्रादि की आराधना में लीन रहने लगे और श्रावकों को आंतकित कर उनसे धन-वसूली करने लगे और श्रावकों के अज्ञान और असंगठन का लाभ उठाते हुए मठाधीश बनकर विलासी जीवन जीने लगे। उत्तर भारत में कतिपय स्थानों पर शास्त्रस्वाध्याय का प्रचलन रहा और कुछ जैन आगम के ज्ञाता विद्वान हुए। उनके प्रभाव से एवं श्रावकों में जाग्रत चेतना के कारण वहाँ तो भट्टारकों की परंपरा समाप्त प्राय हो गई। तथापि दक्षिण भारत में यह परंपरा अभी भी जीवित है। इनमें से एक श्रवण बेलगोल मठ के वर्तमान भट्टारक चारुकीर्ति जी विद्वान हैं और इस परंपरा में आई शिथिलताओं से उपर उठकर संयमित जीवन जीने के लिए प्रयत्नशील है।

भट्टारक परंपरा के इतिहास के अध्ययन से हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि भट्टारक भ्रष्ट मुनियों की अवस्था है। जो दिगम्बर मुनि अपनी चर्या को दोषयुक्त बनाकर धीरे-धीरे वस्त्रादि परिग्रहधारी होकर मठाधीश एवं विलासी बन गए वे भट्टारक कहलाने लगे। वे दिगम्बर भेष छोड़कर वस्त्र पहिनने लगे, किंतु पीछी हाथ में रखते हुए अपना दिगम्बर मुनि के समान पूजा-सम्मान कराते रहे। उन्होंने अपने अस्तित्व के लिए दिगम्बर जैन धर्म के अंतरंग भावपक्ष को गौणकर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रावकों को मंत्रतंत्रादि अन्य बाह्य क्रियाकाडों में उलझाए रखा। तब यह कैसे कहा जा सकता है कि श्रमण संस्कृति एवं जैन धर्म के संरक्षण सवर्द्धन में भट्टारक परंपरा का अभूतपूर्व योगदान रहा? दिगम्बर मुनि की अवस्था में रहने वाले भट्टारकों ने तो अवश्य जैन साहित्य सृजन में योगदान दिया, किंतु वस्त्रादि-परिग्रहधारी भट्टारकों के द्वारा जिनवाणी का लेखन नहीं हुआ। यदि भट्टारकों ने जैन शास्त्रों का संरक्षण भी किया तो ज्ञानप्रसार की दृष्टि से नहीं बल्कि उनके दर्शनों के बदले धन वसूली के उद्देश्य से किया तथा इन ग्रंथों को तालों में बंद रखकर उन्होंने ज्ञान प्रसार को अवरुद्ध ही किया। षट्खंडागम की भूमिका में मख्य संपादक डॉ. हीरालाल जी जैन की निम्न पंक्तियाँ पढ़कर किस जिनवाणी-भक्त की आँखों में आँसू नहीं आयेंगे?

''हमें जो अनुभव मिला है उसे हमारा हृदय भीतर ही भीतर खेद और विषाद के आवेग से रो रहा है। इन सिद्धांतग्रंथों की एक मात्र प्रति किस प्रकार तालों में बंद रही और अध्ययन की वस्तु न रहकर पूजा की वस्तु बन गई। यदि ये ग्रंथ साहित्य क्षेत्र में प्रस्तुत रहते, तो उनके आधार से अब तक न जाने कितना किस कोटि का साहित्य निर्माण हो गया होता। ऐसी विशाल सम्पत्ति पाकर भी हम दरिद्री ही बने रहे। ... हमें उस मनुष्य के जीवन जैसा अनुभव हुआ, जिसके पिता की अपार कमाई पर कोई ताला लगाकर बैठ जाय और वह स्वयं एक-एक टुकड़े के लिए दर-दर भीख माँगता फिरे और इससे जो हानि हुई वह किसकी?''

मूडबिद्री के भट्टारक जी ने प्रारंभ में तो मूल सिद्धांत ग्रंथों की प्रतिलिपि को भी बाहर ले जाने की आज्ञा नहीं दी। लिपिकार किसी प्रकार एक प्रति गुप्त रूप से बाहर ले आये, जिसकी और प्रतिलिपियाँ की गई और उन्हीं के आधार पर हिंदी टीका एवं संपादन कार्य संभव हो सका। महासभा के प्रस्ताव में भट्टाकर परंपरा द्वारा जैन वाङ्मय के संरक्षण एवं प्रणयन की प्रशंसा की है, यह निराधार है। वास्तव में तो वर्तमान भट्टाकर संस्था ने, न तो जैन वाङ्मय के तत्त्वदर्शन का प्रसार किया है और न जैन वाङ्मय का प्रणयन ही किया है।

प्रस्ताव में आगे कहा गया है कि वर्तमान दिगम्बर जैन समाज के स्वरूप की रक्षा करने में अपने संतुलित अनुशासन के द्वारा महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। वास्तविकता तो यह है कि भट्टारक संस्था ने दिगम्बर समाज को तत्त्वज्ञान एवं संयम से वंचित रखने का ही प्रयास किया है और समाज को धर्मक्षेत्र में पंगु बनाकर रखा है। इन्होंने धन वसूलने के लिए समाज को जिस प्रकार आतंकित किया है, उसी को महासभा ने संभवतः संतुलित अनुशासन का नाम दिया है।

यह आश्चर्य-मिश्रित खेद का विषय है कि प्रस्ताव में आगे भट्टारक-परंपरा को स्वस्थ परंपरा घोषित किया है। जिस प्रकार भट्टारक निर्दोष दिगम्बर मुनिभेष को विकृत कर वस्त्रादि परिग्रह धारणकर मठाधीश होकर विलासी जीवन जीने लगे, उससे तो यही कहा जा सकता है कि जैन धर्म में भट्टारक परंपरा से अधिक अस्वस्थ परंपरा और कोई नहीं है।

दिगम्बर जैन धर्म के महान् प्रभावक आचार्य कुंदकुंद ने दर्शनपाहुड में दिगम्बर परंपरा में तीन ही लिंगों की व्यवस्था दी है।

एगं जिणस्स रूवं विदियं उक्किट्ठ सावयाणं तु।
अवरट्ठियाण तइयं चउत्थं पुण लिंग दंसणं णत्थि॥ 18॥

पहला जिनलिंग अर्थात् दिगम्बर मुनि लिंग, दूसरा उत्कृष्ट श्रावक का लिंग अर्थात् क्षुल्लक-ऐलक का लिंग और तीसरा आर्यिका-लिंग। गाथा के अंत में आचार्य देव ने यह घोषित किया है कि जैनदर्शन में उक्त तीन लिंगों के अतिरिक्त और किसी चौथे लिंग की व्यवस्था नहीं है। महासभा निश्चित करे कि जैन दर्शन की आचार्य कुंदकुंद द्वारा स्थापित व्यवस्था में वर्तमान भट्टारकों का कौन सा लिंग है? निस्सन्देहरूप से भट्टारक मुनि नहीं हैं और न वे उत्कृष्ट श्रावक हैं, यद्यपि भट्टारक अपने आपका मुनि के समान सम्मान कराना चाहते हैं। पीछी कमंडल भी रखते हैं, किंतु न वे स्वयं और न महासभा ही उनका मुनि होना स्वीकार करती है। दूसरा विकल्प उत्कृष्ट श्रावक होने का है, सो परिग्रहधारी एवं मठाधीश होने के कारण तथा गृहविरत उद्दिष्टत्यागी नहीं होने के कारण उनको उत्कृष्ट श्रावक भी नहीं माना जा सकता। इस प्रकार भट्टारकों के स्थापित तीन लिंगों में से कोई लिंग सिद्ध नहीं होता और चौथा लिंग जैनदर्शन में होता नहीं, अतः भट्टारकों का जैन दर्शन की परंपरा में कोई स्थान नहीं है। जैन आचार शास्त्रों में भट्टारक लिंग की कहीं कोई

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्यवस्था नहीं है। अत: जब तक भट्टारक दिगम्बर मुनि के भेष में रहे, तब तक तो स्वस्थ परंपरा रही, परंतु जब से भ्रष्ट मुनि भट्टारक कहे जाने लगे तब से भट्टारक परपंरा अत्यंत अस्वस्थ परंपरा हो गई। इस प्रकार जैन आचार शास्त्र के विरुद्ध चर्यावाले भट्टारकों की इस पूर्णत: अस्वस्थ परंपरा को स्वस्थ परंपरा घोषित कर महासभा कैसा धर्म संरक्षण कर रही है?

प्रस्ताव में आगे उल्लेख है ''इस स्वस्थ परंपरा के विषय में कुछ माह पूर्व किसी व्यक्ति ने, जिसमें लेखक का नाम व प्रकाशक का नाम नहीं है, हिंदी और कन्नड़ में ''भट्टारक'' पुस्तक के माध्यम से अपवाद का जो प्रयत्न किया है, श्री भारतवर्षीय दि. जैन (धर्म संरक्षिणी) महासभा उसे अविवेकपूर्ण मानती है तथा संस्था का दृढ़ विश्वास है कि इससे जैनधर्म का अवर्णवाद होगा। उनके प्रयत्नों से आर्ष परंपरा की पोषक समाज की भावनाओं को जबर्दस्त आघात पहुँचा है। यह पुस्तक ''जिनभाषित'' पत्रिका के साथ वितरित की गई है जो चिंता की बात है।'' महासभा के प्रस्ताव के उर्पुक्त अंश अत्यंत अविचारित, दुर्भाग्यपूर्ण एवं आश्चर्यकारी हैं। उपर्युक्त सभी बिंदुओं पर नीचे विचार किया जा रहा है।

ऐसा लगता है कि महासभा के पदाधिकारियों एवं प्रस्ताव के प्रस्तावक समर्थकों ने न पुस्तक को देखा है और न पढ़ा है। बिना देखे-पढ़े ही केवल पक्षापात एवं दुर्भावना के कारण विरोध के लिए विरोध में प्रस्ताव पारित किया गया है। पुस्तक पर मोटे अक्षरों में लेखक का नाम लिखा है ''नाथूराम प्रेमी'' जो उन्होंने सन् 1912 ई. अर्थात् 91 वर्ष पूर्व लिखी थी। श्री नाथूराम प्रेमी जैन इतिहास के प्रामाणिक लेखक और जैन साहित्य के उन्नायक विद्वान थे। वस्तुत: वे विद्वानों एवं लेखकों को जैसे हो वैसे सहायता कर लेखन कार्य के लिए प्रोत्साहित करते थे। उनको जैन विद्वानों का निर्माण करनेवाला विद्वान कहा जा सकता है। ऐसे निर्विवाद प्रामाणिक एवं धर्म प्रभावक विद्वान की प्राचीन पुस्तक की मिथ्या आलोचना कर महासभा ने अत्यंत अशोभनीय कार्य किया है। मेरे विचार में श्री नाथूराम प्रेमी की प्रामाणिकता एवं उनकी धर्म प्रभावना की तीव्र भावना की सम्पूर्ण जैन समाज ने सदैव भूरि-भूरि प्रशंसा की है। पहली बार ऐसे ऐतिहासिक प्रामाणिक धार्मिक विद्वान् की पुस्तक की निराधार आलोचना कर महासभा ने कैसा धर्म संरक्षण किया है?

'जिनभाषित' पत्रिका ने देश के सर्वमान्य निष्पक्ष मूर्धन्य विद्वान् की प्राचीन ऐतिहासिक पुस्तक का जो अनुपलब्ध थी, पुन:प्रकाशन कर, वितरण कर जैन इतिहास से जैन समाज को परिचित कराने का पुण्य कार्य किया है। यद्यपि 'जिनभाषित' ने पुस्तक एवं उसकी विषयवस्तु के संबंध में अपने कोई विचार प्रकट नहीं किये थे, तथापि पत्रिका को भी इसके लिए महासभा का कोप भाजन होना पड़ा है।

पुस्तक को बिना पढ़े ही प्रस्ताव में ''भट्टारक'' पुस्तक को भट्टारकों के अपवाद व धर्म के अवर्णवाद की दोषी घोषित किया गया है। वास्तविकता यह है कि भट्टारक पुस्तक में वर्तमान भट्टारकों के हो रहे अपवाद को दूर करने का उपाय बताया गया है। पुस्तक के पृष्ठ 30 पर ''अब भट्टारकों की जरूरत है या नही'' शीर्षक में निम्न पंक्तियाँ देखें-

'अब इस बात का विचार करना चाहिए कि वर्तमान समय में भट्टारकों की जरूरत है या नहीं? मेरी समझ में जिस तरह राष्ट्रशकट को सुखपूर्वक चलाने के लिए राजकार्य धुंरधर संचालकों की हमेशा जरूरत रहतीं है उसी प्रकार धर्मरथ को सुव्यवस्थित पद्धति से चलाने के लिए धर्मोपदेशकों की व धर्मज्ञों की आवश्यकता रहती है।'

पुन: पृष्ठ 33 पर ''स्वरूप परिवर्तन'' शीर्षक की निम्न पंक्तियाँ पठनीय हैं -

''यह तो निश्चय हो गया कि जैन समाज के लिए भट्टारकों की अथवा उनके समान एक वर्ग की आवश्यकता है।''... ''हमारी समझ में यह बात संभव नहीं जान पड़ती कि भट्टारकों को लोग उनके वर्तमान स्वरूप में धर्मगुरु स्वीकार कर लेंगे। क्योंकि दिगम्बर सम्प्रदाय में जिन ग्रंथों की मान्यता है, उनके अनुसार जैसा कि पूर्व में कहा जा चुका है, भट्टारक पद न तो गृहस्थों की श्रेणी में आ सकता है और न मुनियों की। यद्यपि बीस पंथ के अनुयायी जिनकी संख्या लाखों की है, अब भी इन्हें अपना धर्मगुरु मानते हैं, परंतु यह नहीं समझना चाहिए कि वे इनके चरित्रों से संतुष्ट हैं। वे यह जरूर चाहते है कि इनके स्वरूप में परिवर्तन हो जावे। इसके सिवाय बीसपंथियों में जो समझदार हैं, धर्म के जानकार हैं, भोले भक्त नहीं है, वे भट्टारकों को मुनि समझ कर अपना गुरु नहीं मानते है अर्थात् वे गुरु के स्वरूप को अन्यथा कल्पित नहीं करते हैं, किंतु धर्म के एक संचालक, प्रचारक या उपदेशक समझकर उनका सत्कार करते हैं। इससे यदि भट्टारकों के स्वरूप में उचित परिवर्तन किया जाय और शांतता से उसका अभिप्राय सर्व साधारण पर प्रकट कर दिया जाय, तो हमारी समझ में उसे तेरहपंथी जो कि उन्हें भेषी व कुलिंगी समझते हैं और बीसपंथी जो इन्हें शास्त्रोक्त नहीं, किंतु काम चलाउ गुरु समझते हैं, दोनों ही स्वीकार करेंगे।''... ''स्वरूप परिवर्तन के लिए हमें एक यह युक्ति सूझ पड़ती है कि ये लोग अपने को मुनि नहीं, किन्तु सातवीं-आठवीं प्रतिमाधारी गृहस्थ ही स्वीकार करें और सब लोग उन्हें यही समझकर आदर सत्कार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करें।''... ''इस परिवर्तन का हमको विश्वास है कि कट्टर तेहरपंथी और भोले बीसपंथी दोनों ही अनुमोदन करेंगे। बल्कि यह मार्ग चल गया तो बीसपंथ-तेरहपंथ में जो वैमनस्य बढ़ गया है, वह कम होने लगेगा और धीरे-धीरे दोनों एक हो जायेंगे।''

महासभा आचार्य शांतिसागर जी महाराज को अपना आदर्श मानती है और उनके विचारों को पूर्णतः मान्य करती है। आध्यात्मिक ज्योति के लेखक पं. सुमेरचन्द्र जी दिवाकर ने पुस्तक के पृष्ठ 269 पर आचार्य महाराज के साथ रहे मुनि श्री वर्द्धमान सागरजी से आचार्य महाराज के संबंध में हुई वार्ता प्रकाशित की है, जिसको भट्टारक पुस्तक में भी उद्घृत किया है। ''वे (आचार्य महाराज) श्रवण बेलगोला में 15 दिन ठहरे थे। वहाँ के मठ के स्वामी भट्टारक जी के यहाँ आहार की विधि लगती थी, किंतु आचार्य महाराज वहाँ आहार नहीं लेते थे। महाराज कहते थे ''मठ का अन्न ठीक नहीं है। वहाँ का धन प्रायश्चित, दण्ड आदि द्वारा प्राप्त होता है। निर्माल्य का धन नहीं लेना चाहिए'' उपाध्याय के यहाँ भी महाराज आहार को नहीं जाते थे।'' इस प्रकार आचार्य माहराज भट्टारकों को सद्गृहस्थ भी नहीं मानते थे और उनके यहाँ आहार ग्रहण करना भी उपयुक्त नहीं समझते थे। महासभा का दुर्भावनापूर्ण पक्षव्यामोह इस सीमा तक पहुँच गया है कि उसने आचार्य शांतिसागर महाराज के भी विचारों के विरोध में यह प्रस्ताव पारित किया है।

पुस्तक के उपर्युक्त उद्धरणों से यह स्पष्ट है कि पुस्तक में सद्भावना पूर्वक भट्टारक सम्प्रदाय में आए दोषों को दूर कर उसके स्वरूप परिवर्तन के द्वारा उसको सर्वमान्य और सर्वोपयोगी प्रभावक संस्था बनाने का मार्ग सुझाया गया है। इसको अपवाद कहना एवं धर्म का अवर्णवाद कहना निराधार एवं आपत्तिजनक है।

निर्दोष व्यक्ति पर मिथ्या दोषारोपण करना अपवाद कहलाता। दोषों को बताकर दोष दूर करने की एवं पुनः सन्मार्ग में स्थित होने की प्रेरणा तो स्थितीकरण कहलाती है जो सम्यग्दर्शन का अंग है। अतः भट्टारक पुस्तक के लेखक व वितरकों पर भट्टारक संस्था के अपवाद का दोष नहीं लगाया जा सकता, बल्कि उन्हें तो स्थितीकरण का श्रेय जाता है। दूसरी और भट्टारकों के विद्यमान दोषों एवं चारित्रिक विकृतियों का समर्थन करने एवं स्थितीकरण के लिए स्वरूप-परिवर्तन के सुझाव का विरोध करने के कारण महासभा धर्म के अवर्णवाद तथा अपवाद का दोष अनायास अपने उपर आमंत्रित कर रही है।

महासभा के महारथीगण कृपया विचार करें कि इस प्रस्ताव द्वारा भट्टारक संस्था में आई असाधारण विकृतियों का समर्थन कर एवं सुधार के सुझावों का विरोध कर वे कैसा धर्म संरक्षण कर रहे हैं?

दुर्भाग्यवश दिगम्बर जैनधर्म इस समय दो ओर से हो रहे आंतरिक आक्रमणों के कारण सिसक रहा है। एक ओर यह कहा जा रहा है कि पूजा, दान, व्रत, संयम आदि धर्म नहीं है और दिगम्बर मुनि महाराजों के स्थान पर अव्रती गृहस्थों को गुरु माना जाने लगा है। उनकी धारणा है कि इस युग में सच्चा दिगम्बर साधु कोई भी नहीं है। दूसरी ओर प्रत्येक नग्नवेषधारी साधु को सच्चा साधु मानते हुए शिथिलाचारी साधुओं को भी महिमामंडित करते हुए उनको अपने शिथिलाचार में प्रोत्साहित किया जाता है। कुछ साधु श्रावकों को धर्म तत्त्व से वंचित रखते हुए मंत्र-तंत्र अनुष्ठान पूजादि के द्वारा उनमें लौकिक सिद्धियों का लोभ उत्पन्न कर अपने अनुयायियों का समूह बना बैठे हैं। बहुसंख्यक भट्टारक भी इसी प्रकार अपने अस्तित्व के लिए श्रावकों को धर्म की वैज्ञानिकता से अपरिचित रखते हुए मंत्र-तंत्रादि क्रियाकांडों में उलझाए रखते हैं। ऐसे संकट के समय दिगम्बर जैनों की प्राचीनतम प्रतिनिधि संस्था महासभा का यह नैतिक दायित्व है कि वह समाज को संगठित कर योजनाबद्ध तरीके से इस आध्यात्मिक, वैज्ञानिक, वीतराग दिगम्बर जैन तत्त्वज्ञान का प्रचार प्रसार करे। मेरी विनम्र प्रार्थना है कि इस प्रकार महासभा के मंच से ऐसे विघटनकारी प्रस्ताव पारित करने में आप शक्ति व्यय नहीं करें और सृजनात्मक सकारात्मक सोच के आधार पर समाज को संगठित कर समीचीन धर्म का संरक्षण करें।

मुझे महासभा के यशस्वी अध्यक्ष एवं महामंत्री की पवित्र भावना और क्षमता पर गहरा विश्वास है। यह केवल पक्षव्यामोह ही है जो उन्हें भटका देता है। उन्होंने मुझे दो तीन बार समान विचारवाले धर्म श्रद्धालुओं को एकत्र कर विवादों से उपर उठकर संगठन को दृढ़ करने की अपनी पावन भावना बताई। अभी तक एक स्थान पर बैठकर विचार विमर्श का अवसर नहीं मिला। किंतु यदि हम ऐसा कर सके तो निश्चय ही महासभा को व्यापक उदार और विशाल बनाकर इसके साथ लगे ''धर्म संरक्षणी'' पद को सार्थक सिद्ध कर पायेंगे।

मूलचन्द लुहाड़िया

लाली मेरे लाल की, जित देखूँ तित लाल।
लाली देखन मैं गई, मैं भी हो गई लाल॥
सन्त कबीर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विनयावनति

आचार्य श्री विद्यासागर जी

विनय जब अंतरंग में प्रादुर्भूत हो जाती है, तो उसकी ज्योति सब ओर प्रकाशित होती है। वह मुख पर प्रकाशित होती है, आँखों में से फूटती है, शब्दों में उद्भूत होती है और व्यवहार में प्रदर्शित होती है।

विनय का महत्त्व अनुपम है। यह वह सोपान है, जिस पर आरूढ़ होकर साधक मुक्ति की मंजिल तक पहुँच सकता है। विनय आत्मा का गुण है और ऋजुता का प्रतीक है। यह विनय तत्त्व-मंथन से ही उपलब्ध हो सकता है। विनय का अर्थ है सम्मान, आदर, पूजा आदि। विनय से हम आदर और पूजा तो प्राप्त करते ही हैं, साथ ही सभी विरोधियों पर विजय भी प्राप्त कर सकते हैं। क्रोधी, कामी, मायावी, लोभी सभी विनय द्वारा वश में किये जा सकते हैं। विनयी दूसरों को भलीभाँति समझ पाता है और उसकी चाह यही रहती है कि दूसरा भी अपना विकास करे। अविनय में शक्ति का बिखराव है, विनय में शक्ति का केन्द्रीकरण है। कोई आलोचना भी करे तो हम उसकी चिन्ता न करें। विनयी आदमी वही है, जो गाली देनेवाले के प्रति भी विनय का व्यवहार करता है।

एक जंगल में दो पेड़ खड़े हैं- एक बड़ का और दूसरा बेंत का। बड़ का पेड़ घमण्ड में चूर है। वह बेंत के पेड़ से कहता है- ''तुम्हारे जीवन से क्या लाभ है? तुम किसी को छाया तक नहीं दे सकते और फल तथा फूल का तो तुम पर नाम ही नहीं। मुझे देखो, मैं कितनों को छाया देता हूँ। यदि मुझे कोई काट भी ले तो मेरी लकड़ी से बैठने के लिए सुन्दर आसनों का निर्माण हो सकता है। तुम्हारी लकड़ी से तो दूसरों को पीटा ही जा सकता है।'' सब कुछ सुनकर भी बेंत का पेड़ मौन रहा। थोड़ी देर में मौसम ऐसा हो जाता है कि तूफान और वर्षा दोनों साथ-साथ प्रारम्भ हो जाते हैं। कुछ ही क्षणों में बेंत का पेड़ साष्टांग दण्डवत् करने लगता है, झुक जाता है। किन्तु बड़ का पेड़ ज्यों का त्यों खड़ा रहा। देखते-देखते ही पाँच मिनट में तूफान ने उसे उखाड़ फेंका। बेंत का पेड़ जो झुक गया था, तूफान के निकल जाने पर फिर ज्यों का त्यों खड़ा हो गया। विनय की जीत हुई, अविनय हार गया। जो अकड़ता है, गर्व करता है उसकी दशा बिगड़ती ही है।

हमें शब्दों की विनय भी सीखना चाहिये। शब्दों की अविनय से कभी-कभी बड़ी हानि हो जाती है। एक भारतीय सज्जन एक बार अमेरिका गये। वहाँ उन्हें एक सभा में बोलना था। लोग उन्हें देखकर हँसने लगे और जब वे बोलने के लिये खड़े हुये तो हँसी और अधिक बढ़ने लगी। उन भारतीय सज्जन को थोड़ा क्रोध आ गया, मंच पर जाते ही उनका पहला वाक्य था 'पचास प्रतिशत अमेरिकन मूर्ख होते हैं।'अब क्या था। सारी सभा में हलचल मच गई और सभा अनुशासन से बाहर हो गई। पर तत्काल ही उन भारतीय सज्जन ने थोड़ा विचार कर कहना शुरू किया- ''क्षमा करें, पचास प्रतिशत अमेरिकन मूर्ख नहीं होते।'' इन शब्दों को सुनकर सभा में फिर शान्ति हो गई और सब लोग यथास्थान बैठ गये। देखो, अर्थ में कोई अन्तर नहीं था, केवल शब्द विनय द्वारा वह भारतीय सबको शान्त करने में सफल हो गया।

विनय जब अन्तरंग में प्रादुर्भूत हो जाती है तो उसकी ज्योति सब ओर प्रकाशित होती है। वह मुख पर प्रकाशित होती है आँखों में से फूटती है, शब्दों में उद्भूत होती है और व्यवहार में भी प्रदर्शित होती है। विनय गुण समन्वित व्यक्ति की केवल यही भावना होती है कि सभी में यह गुण उद्भूत हो जाय। सभी विकास की चरम सीमा प्राप्त कर लें।

मुझ से एक सज्जन ने एक दिन प्रश्न किया, ''महाराज, आप अपने पास आनेवाले व्यक्ति से बैठने को भी नहीं पूछते। बुरा लगता है। आप में इतनी भी विनय नहीं, महाराज।'' मैंने उनकी बात बड़े ध्यान से सुनी और कहा। ''भैया, एक साधु की विनय और आपकी विनय एक सी कैसे हो सकती है? आपको मैं कैसे कहूँ ''आइये बैठिये।'' क्या यह स्थान मेरा है? और मान लो कोई केवल दर्शन मात्र के लिए आया हो तो? इसी तरह मैं किसी से जाने की भी कैसे कह सकता हूँ? मैं आने-जाने की अनुमोदना कैसे कर सकता हूँ? कोई मान लो रेल या मोटर से प्रस्थान करना चाहता हो, तो मैं उन वाहनों की अनुमोदना कैसे करूँ, जिनका मैं वर्षों पूर्व त्याग कर चुका हूँ। और मान लो कोई केवल परीक्षा करना चाहता हो तो, उसकी विजय हो गयी और मैं पराजित हो जाऊँगा। आचार्यों का उपदेश मुनियों के लिए केवल इतना ही है कि वे हाथ से कल्याण का संकेत करें और मुख का प्रसाद बिखेर दें। इससे ज्यादा उन्हें कुछ और नहीं करना है।

''मैत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्यस्थ्यानि च सत्त्वगुणाधिक क्लिश्यमानाविनयेषु।'' यह सूत्र है। तब मुनि आपके प्रति कैसे अविनय की भावना रख सकता है। उसे तो कोई गाली भी दे तो भी वह सबके प्रति मैत्री-भाव ही रखता है। जंगल में दंगल नहीं करता, मंगल में अमंगल नहीं करता। वह तो सभी के प्रति मंगल-भावना से आतप्रोत है।

सो धर्म मुनिन कर धरिये, तिनकी करतूति उचरिये।
ताकूँ सुनिये भवि प्राणी, अपनी अनुभूति पिछानी॥

साधु की मुद्रा तो ऐसी वीतरागतामय होती है, जो दूसरों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

को आत्मानुभव का प्रबल साधक बन जाती है।

फिर एक बात और भी है। अगर किसी को बिठाना दूसरों को अनुचित मालूम पड़े अथवा स्थान इतना भर जाय कि फिर कोई जगह ही अवशेष न रहे, तो ऐसे में मुनि महाराज वहाँ से उठना पसन्द करेंगे अथवा उपसर्ग समझ कर बैठे रहेंगे, तो भी उनकी मुद्रा ऐसी होगी कि देखनेवाला भी उनकी साधना और तपस्या को समझ कर शिक्षा ले सके। बिच्छू के पास एक डंक होता है। जो व्यक्ति उसे पकड़ने का प्रयास करता है, वह उसको डंक मार ही देता है। एक बार ऐसा हुआ। एक मनुष्य जा रहा था, उसने देखा कीचड़ में एक बिच्छू फँसा हुआ है। उसने उसे हाथ से जैसे ही बाहर निकालना चाहा, बिच्छू ने डंक मारने रूप प्रसाद ही दिया, और कई बार उसे निकालने की कोशिश में डंक मारता रहा, तब लोगों ने उससे कहा- ''बावले हो गये हो। ऐसा क्यों किया तुमने?'' ''अरे भाई बिच्छू ने अपना काम किया और मैंने अपना काम किया, इसमें मेरा बावलापन क्या?'' उस आदमी ने ये उत्तर दिया। इसी प्रकार मुनिराज भी अपना काम करते हैं। वे तो मंगल की कामना करते हैं और गाली देनेवाले उन्हें गाली देने का काम करते हैं। तब तुम कैसे कह सकते हो कि साधु किसी के प्रति अविनय का भाव रख सकता है?

शास्त्रों में अभावों की बात आई है। जिसमें प्रागभाव का तात्पर्य है ''पूर्व पर्याय का वर्तमान में अभाव'' और प्रध्वंसाभाव का अभिप्राय है ''वर्तमान पर्याय में भावी पयार्य का अभाव''। इसका मतलब है कि जो उन्नत है वह गिर भी सकता है और जो पतित है वह उठ भी सकता है। और यही कारण है कि सभी आचार्य, महान् तपस्वी भी त्रिकालवर्त्ती तीर्थंकरों को नमोस्तु प्रस्तुत करते हैं और भविष्यत् काल के तीर्थंकरों को नमोस्तु करने में भावी नय की अपेक्षा सामान्य संसारी जीव भी शमिल हो जाते हैं तब किसी की अविनय का प्रश्न ही नहीं है। आपकी अनंत शक्ति को भी सारे तपस्वियों ने पहिचान लिया है, चाहे आप पहिचानें अथवा नहीं। आप सभी में केवलज्ञान की शक्ति विद्यमान है यह बात भी कुन्दकुन्दादि महान् आचार्यों द्वारा पहचान ली गई है।

अपने विनय गुण का विकास करो। विनय गुण से असाध्य कार्य भी सहज साध्य बन जाते हैं। यह विनय गुण ग्राह्य है, उपास्य है, आराध्य है। भगवान् महावीर कहते हैं- ''मेरी उपासना चाहे न करो, विनय गुण की उपासना जरूर करो। विनय का अर्थ यह नहीं है कि आप भगवान् के समक्ष तो विनय करें और पास-पड़ोस में अविनय का प्रदर्शन करें। अपने पड़ौसी की भी यथायोग्य विनय करो। कोई घर पर आ जाये तो उसका सम्मान करो।'' ''मानेन तृप्ति र्न तु भोजनेन'' अर्थात् सम्मान से तृप्ति होती है, भोजन से नहीं, अत: विनय करना सीखो, विनय गुण आपको सिद्धत्व प्राप्त करा देगा।

'समग्र' (चतुर्थखण्ड) से उद्धृत

हार्मोनल दूध पीने से नपुंसकता का खतरा बढ़ा धड़ल्ले से बिक रहे प्रतिबंधित ऑक्सीटोसिन इंजेक्शन

सावधान! दूधवाला कहीं,आपके जीवन भर की खुशियाँ छीनकर तो नहीं ले जा रहा। यदि आपकी शक्ति क्षीण होती जा रही है तो तय मानिए कि आपको नपुंसकता की बीमारी ने घेर लिया है। दूधवाले पर नजर रखिए और दूषित दूध पीना बंद कर दें।

गौरतलब है कि घर-घर यह बीमारी पहुँचाने का ठेका ले रखा है जिले के मेडीकल स्टोर संचालकों ने। दरअसल इन दिनों अधिकांश मेडीकल स्टोरों पर प्रतिबंधित 'ऑक्सीटियोसिन' इंजेक्शन धड़ल्ले से बेचे जा रहे हैं। जल्दी व अधिक दूध निकालने के प्रलोभन में दुधारू पशुओं को इंजेक्शन लगाये जा रहे हैं। यह इंजेक्शन मात्र 75 पैसे में आसानी से पशु मालिकों को मिल जाता है।

शाहगढ़ प्रतिनिधि के अनुसार पुश चिकित्सालय में पदस्थ डॉ. खान ने बताया कि आक्सोटियोसिन हार्मोनल इंजेक्शन है। यह इंजेक्शन दुधारू जानवरों के शरीर पर दुष्प्रभाव डालता है और दूध में मौजूद पौष्टिक तत्त्वों को नष्ट कर देता है। दूषित दूध के जरिए मनुष्य के शरीर में पहुँचने वाले हार्मोनल मनुष्य की कामुक शक्ति क्षीण करते हैं। यह दूषित दूध भविष्य में नपुंसकता की बीमारी का सबब बन सकता है। वहीं बच्चों के स्वास्थ्य पर इसका घातक असर होता है। बच्चों का विकास अवरुद्ध हो जाता है।

ज्ञातव्य हो कि न्यायालय के आदेश के बाद इस इंजेक्शन को प्रतिबंधित किए जाने के बाद मेडीकल स्टोर संचालकों को हिदायत दी गई थी कि चिकित्सक द्वारा लिखी पर्ची पर आवश्यकतानुसार इंजेक्शन बेचा जाना चाहिए।

परंतु मेडीकल संचालकों की मनमानी पर जिला प्रशासन व औषिधी नियंत्रक के उदासीन रवैये के चलते लगाम नहीं लगा पा रही। वहीं इस इंजेक्शन का उपयोग करने वाले पशुमालिकों का तर्क है कुछ दुधारू जानवरों की आदत होती है कि जब तक उन्हें भरपेट चारा नहीं मिल जाता दूध नहीं देते। और गांव से शहर तक आना और ग्राहकों को समय पर दूध उपलब्ध कराना पड़ता है।

इसी मजबूरी के चलते इन इंजेक्शनों का इस्तेमाल करना पड़ता है। वहीं जिन दुधारू पुशओं के बच्चे मर जाते हैं, उन्हें बगैर इंजेक्शन लगाए दुहना मुश्किल होता है।

'दैनिक जागरण' भोपाल २१ फरवरी २००३

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कार्यकारण-व्यवस्था

मुनि श्री निर्णयसागर जी

चाहे सांसारिक क्षेत्र हो या पारमार्थिक क्षेत्र, सर्वत्र जो भी कार्य सम्पन्न होते हैं, वहाँ कारणपूर्वक ही कार्य सम्पन्न होते हैं। किसी भी कार्य का जो निश्चित कारण होता है, उस कारण की उपेक्षा करके वह कार्य न कभी सम्पन्न हुआ, न भविष्य में सम्पन्न किया जा सकता है। जैसे किसी भूखे व्यक्ति को अपनी क्षुधाशमन करने के लिये रोटी बनाना है। तब रोटी तो हुई कार्य और आटा हुआ कारण। जब तक आटा नहीं होगा, तब तक रोटी बनाना, रोटी प्राप्त करना संभव ही नहीं है। अत: रोटी बनाने के लिए आटे का सद्भाव नियमत: आवश्यक है। आज तक किसी ने भी आटे के अभाव में अथवा आटे का अभाव करके रोटी नहीं बनाई है, न बनाते हुए किसी अन्य व्यक्ति को देखा होगा। उपर्युक्त उदाहरण से हम समझ सकते हैं कि नियामक कारण का (साधक कारण का) अभाव करके कोई भी कार्य सम्पन्न करना संभव नहीं है।

शंका- इस प्रकार की कार्य कारण व्यवस्था के नियम में भी कोई कारण है क्या?

समाधान- कोई भी कारण नहीं, यह तो वस्तु व्यवस्था है, वस्तु का स्वभाव है।

शंका- कार्य किसे कहते हैं?

समाधान- जो कर्त्ता के द्वारा किया जाता है, उसे कार्य कहते हैं।

शंका- कारण किसे कहते हैं?

समाधान- जिसके होने पर कार्य होता है, जिसके नहीं होने पर इष्ट कार्य नहीं होता है, वह कारण कहलाता है। अध्यात्म में कारण दो प्रकार के कहे गये हैं- १. उपादान कारण २. निमित्त कारण।

शंका- उपादान कारण किसे कहते हैं?

समाधान- जो कारण, कार्य रूप में परिणमित होता है, वह उपादान कारण कहलाता है, जैसे रोटी के लिये आटा।

शंका- निमित्त कारण किसे कहते हैं?

समाधान- जो कारण स्वयं कार्य रूप में परिणमित तो नहीं होता है, परंतु कार्य के होने में सहयोगी अवश्य होता है। जैसे रोटी बनाने में चकला, बेलन, तबा आदि। अन्य प्रकार से भी कारण के भेद देखे जाते हैं, जैसे १. साधक कारण २. बाधक कारण।

शंका- साधक कारण किसे कहते हैं?

समाधान- जो कारण कार्य रूप में परिणमन करता है अथवा कार्य के सम्पन्न होने में सहयोगी हुआ करता है। जैसे रोटी निर्माण के लिए चकला, बेलन आदि।

शंका- बाधक कारण किसे कहते हैं?

समाधान- जो कारण कार्य रूप परिणमन में किसी प्रकार सहयोगी तो होता नहीं है, परन्तु कार्य का बाधक सिद्ध होता है। बाधक कार्य के सद्भाव में इष्ट कार्य संभव नहीं हो सकता है। जैसे कमल के खिलने में रात्रि, रोटी बनाने के लिये अनाज के टुकड़े अथवा चोकर।

शंका- एक कारण से एक ही कार्य सम्पन्न हो सकता है अथवा अनेक कार्य?

समाधान- न्याय ग्रंथों में कहा है "एककारणेनानेक कार्यसम्भवाद् वह्निवत्" अर्थात् एक कारण से अनेक कार्य संभव हो सकते हैं अग्नि के समान। एक अग्नि कारण से प्रकाश, प्रताप, पाचकत्व कार्य संभव देखे जाते हैं। इसी प्रकार आटे के द्वारा रोटी बनती है, हलुआ भी बनता है, कढी भी बनती है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि साधक कारणों का अभाव करके किसी भी कार्य को सम्पन्न नहीं किया जा सकता है। यही कारण-कार्य-व्यवस्था जैनदर्शन में हमेशा रही है, कम से कम स्वाध्याय करनेवाले साधर्मी बंधुओं को अवश्य ही समझ लेना चाहिये। किंतु स्वाध्याय करते हुए भी भटकना नहीं चाहिये।

परम्पूज्य आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज स्वाध्याय के प्रसंग में हमेशा कहते हैं- दुकान घर की हो सकती है, दुकान में विक्रय होने वाला माल भी घर का हो सकता है, विक्रय करने वाला व्यक्ति घर का हो सकता है, परंतु दुकान में तराजू, बाँट, लीटर, मीटर कभी भी घर के नहीं होने चाहिये। यदि तराजू बाँट लीटर, मीटर घर के बना लिये तो अपराध माना जावेगा। उसे शासन-प्रशासन द्वारा दण्डित किया जावेगा। अत: अच्छा होगा कि सरकारी नियमों की तरह जैन दर्शन के पढ़ने-पढ़ाने वाले जैन दर्शन के नियमों का पालन करें। यही सच्चे श्रावक की पहचान होगी। अन्यथा शास्त्र स्वाध्याय करके-कराके भी भटक सकते हैं। सही कार्यकारण-व्यवस्था की जानकारी के बिना शास्त्र स्वाध्याय करना कराना वरदान नहीं अभिशाप होगा।

वर्तमान (२००,२५० वर्षों) के कुछ शास्त्र स्वाध्यायकारों ने पूर्व आचार्यों की वाणी को न समझते हुए कार्यकारण व्यवस्था को ही बिगाड़ दिया है। हम ऊपर समझ कर आये हैं कि कारण के सद्भाव में कार्य सम्पन्न होता है, न कि कारण के अभाव में। जैसे अग्नि के अभाव में न प्रकाश होगा, न प्रताप होगा। कार्य कारण व्यवस्था को नहीं समझने वाले विद्वान् लोगों का कहना है कि शुभोपयोग का अभाव शुद्धोपयोग का कारण है, और शुद्धोपयोग केवलज्ञान का कारण है। यहाँ एक जगह अभाव को कारण माना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तो दूसरी जगह सद्भाव को कारण माना है। यदि शुभोपयोग के अभाव को ही शुद्धोपयोग का कारण मान लिया जायगा तो दूसरी बाधा यह आवेगी कि शुभोपयोग का अभाव पूर्व में अनादि काल से रहा है अर्थात् अशुभोपयोग रहा है, तब शुद्धोपयोग मान लेना चाहिये। इस प्रकार की व्यवस्था को पूज्य आचार्य महाराज जैन दर्शन का घोटाला संज्ञा देते हैं।

शंका- सब जगह सद्भाव को कारण मान लिया जावेगा, तो शुभोपयोग का कारण अशुभोपयोग मान लिया जावेगा, यह कैसे?

समाधान- अशुभोपोग को शुभोपयोग का कारण मानने में बाधा ही क्या हो सकती है? यह तो कारण बनता ही है। जब सम्यग्दर्शन प्रकट होता है, वह मिथ्यात्वपूर्वक ही होता है। किंतु सम्यग्दर्शन के लिये कारण सामान्य मिथ्यादर्शन नहीं, किंतु सातिशय मिथ्यात्व ही सम्यग्दर्शन के लिये कारण बनता है। और भी मोक्षमार्ग में कार्यकारण व्यवस्था का प्रसंग आता है, वह भी समझने योग्य है। मैं आचार्यश्री की ही भाषा शैली में बतलाना चाहूँगा।

जब कोई भी भद्र मिथ्यादृष्टि मिथ्यात्व कर्म के मन्द उदय को प्राप्त होता है, तभी सम्यग्दर्शन की भूमिका बनती है। मिथ्यात्व कर्म का मंद उदय सम्यग्दर्शन की पंचलब्धि में से प्रथम लब्धि के लिये कारण है, जिसे क्षयोपशम लब्धि कहते हैं। क्षयोपशमलब्धि कारण है विशुद्धिलब्धि का। विशुद्धिलब्धि कारण है देशनालब्धि का। देशनालब्धि कारण है प्रायोग्यलब्धि का। प्रायोग्यलब्धि कारण है पंचम करणलब्धि के प्रथम करण अध:करण का। अध:करण कारण है अपूर्वकरण का। अपूर्वकरण कारण है अनिवृत्तिकरण का। अनिवृत्तिकरण कारण है सम्यग्दर्शन का। सम्यग्दर्शन, शुभोपयोग कारण है शुद्धोपयोग का। शुद्धोपयोग कारण है केवलज्ञान का। केवलज्ञान कारण है मोक्ष का। यही मोक्ष मार्ग का क्रम है, मोक्षमार्ग है।

उपर्युक्त कार्यकारण व्यवस्था गुरु देशना और मेरा चिंतन है। इस प्रसंग में कहीं मेरी कलम फिसल गयी हो तो अवगत कराएँ। किसी को कष्ट हुआ तो मुझे क्षमा करें। बस इतना ही।

बोधकथा

दया की पुकार

दीवान अमरचंद जयपुर के निवासी थे। एक बार राजा शिकार करने गये। साथ में दीवान जी को ले गये। वन में भटकते-भटकते एक हरिण समूह दिखाई दिया। राजा ने पीछा किया हरिणों का। दीवान को यह अच्छा न लगा। उसने सोचा राजा तो प्राणियों का रक्षक होता है, आज वही इनका भक्षक बन रहा है। निरपराध पशुओं को मारना राजा का अत्याचार है। उसने करुण स्वर में आवाज दी कि हे अनाथ हिरणो! ठहर जाओ। आज जब तुम्हारा रक्षक ही भक्षक बन रहा है, तो तुम कहाँ जाकर प्राण बचा सकोगे? तुम्हारा भागना व्यर्थ है।

दीवान की करुण पुकार सुन हिरन खड़े हो गये। राजा आश्चर्य में पड़ गया। तीर कमान चलाना भूलकर दीवान को आश्चर्यभरी दृष्टि से देखना लगा। सोचता है- इसकी वाणी का यह कैसा चमत्कार है। उसने पूछा-हिरण रुके कैसे? इनके कानों में तुमने कौन सा मंत्र फूँक दिया। बार-बार पूछने पर दीवान ने कहा-राजन्! इन्हें रोकने में कारण है प्रेम की शक्ति। अहिंसा की शक्ति दया और करुणा की पुकार।

दीवान ने कहा- राजन्! अपने पद की ओर ध्यान दें। आपका कर्त्तव्य प्रजा की रक्षा करना है। धनुष-वाण निरपराध पशुओं का वध करने के लिए नहीं, बल्कि उनकी सुरक्षा के लिए होना चाहिये आपने राजगद्दी पर बैठते समय संकल्प किया था अनाथ दीन-हीन प्राणियों की रक्षा करने का। क्या वह संकल्प भूल गये।

राजा यह सब चुपचाप सुनता रहा। उसने पुन: पूछा कि तुम्हारी वाणी उन्हें कैसे समझ में आ गयी? दीवान ने कहा-दया की पुकार, रक्षा की पुकार सभी प्राणी समझते हैं। वह कानों के बिना भी, वाणी के बिना भी मात्र भावों से भी समझ में आ जाती है। राजा दीवान के आगे कुछ न कर सका। उसने हिरणों को नहीं मारा उस दिन। वह लौट पड़ा अपने महल की ओर। दया की पुकार के आगे झुक जाना पड़ा उसे।

आशय यह है कि जो काम हजारों वर्ष में नहीं हो सका वह संयत और अहिसंक मन के द्वारा अल्पकाल में भी संभव है मन संयत हो, इसके लिए उसका निर्विकार बनना आवश्यक है। 'तामस' का विलोम शब्द होता है 'समता'। जीवन में समताभाव जागे यही सफलता की कुंजी है।

'विद्या-कथाकुञ्ज'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिनदीक्षा का पात्र कौन?

मुनि श्री विशुद्धसागर जी

आज प्राणी अपने आपको दु:खित अनुभव कर रहा है, सुख की खोज में दौड़ रहा है पर खोज वहाँ रहा है जहाँ सुख है नहीं, जहाँ है वहाँ पर दृष्टि भी नहीं गयी। पर पदार्थों में, इन्द्रिय भोगों में, सुख की खोज करना गाय के सीगों से दुग्ध निकालना है। सत्यसुख ब्रह्मस्वरूप है। इन्द्रियों के तुच्छ सुखाभास को सुख स्वीकारना सबसे बड़ी अल्पज्ञता का द्योतक है। इन्द्रियजन्य सुख दु:खरूप है आचार्य भगवन् श्री कुन्दकुन्द स्वामी कहते हैं-

सपरं बाधासहियं विच्छिण्णं बंधकारणं विसमं।
जं इंदियेहिं लद्धं तं सोक्खं दुक्खमेव तहा॥

प्रवचनसार १/७५

अर्थ- जो पांच इन्द्रियों से प्राप्त हुआ सुख है वह सुख दु:ख रूप ही है, क्योंकि वह सुख पराधीन है, क्षुधा तृषादिबाधा युक्त है, असाता के उदय से विनाश होने वाला है, कर्म बन्ध का कारण है। क्योंकि जहाँ इन्द्रिय सुख होता है वहाँ अवश्य रागादिक दोषों की सेना होती है। उसी के अनुसार अवश्य कर्म धूलि लगती है। और वह सुख विषम अर्थात् चंचलपन से हानि वृद्धि रूप है।

आचार्य उमास्वामी ने इन्द्रिय सुख को दुखरूप ही कहा है- ''दु:खमेव वा।'' (तत्त्वार्थसूत्र/७/१०)

इस प्रकार अंतरंग में वैराग्य भावना से युक्त होकर बाह्य सुखों को दु:ख रूप जानकर भव्यजीव आत्मसुख की खोज में निकलता है, तब वह सुख को कैसे प्राप्त होता है? आचार्य कुन्दकुन्द महाराज लिखते हैं -

पडिवज्जदु सामण्णं जदि इच्छदि दुक्खपरिमोक्खं।

(प्रवचनसार/३/१)

अर्थ- यदि तुम्हारी आत्मा भी दुख से मुक्त होने की अभिलाषा करती है, तो यतिधर्म को प्राप्त होओ।

यति धर्म स्वीकार किये बिना किसी का कल्याण न हुआ है न होगा। जितने आज तक सिद्ध हुए हैं, व होंगे वे सब जिनमुद्रा धारण करके ही। तीर्थंकर भगवान भी क्यों न हों, उन्हें भी दिगम्बरी जैनश्वरी दीक्षा धारण करना पड़ती है। कुन्दकुन्द स्वामी सुत्तपाहुड में कहते हैं-

ण वि सिज्झइ बत्थधरो, जिणसासणे जह वि होई तित्थयरो।
णग्गो हि मोक्खमग्गो, सेसा उम्मग्गया सव्वे॥२३॥

अहो! धन्य हैं वे जीव जिन्होंने अरिहन्त देव के द्वारा स्वीकार किए गए जिन भेष को प्राप्त किया है। महाव्रतों को सामान्यजन धारण नहीं कर पाते हैं, महापुरुष धारण करते हैं। इसलिए मुनीश्वरों के व्रतों को महाव्रत कहते हैं अथवा यो कहें जो व्रत व्यक्ति को महान् बना देते हैं। वे अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह महाव्रत कहलाते हैं।

वह श्रेष्ठ मुमुक्षु जीव जिसके अंत: करण में वैराग्य के अंकुर स्फुट हुए हों, आत्महित की भावना से युक्त होकर मंगलोत्तम शरणभूत आचार्य परमेष्ठी के चरणों में पहुँच जाता है। वह यह भी ध्यान रखता है कि मैं गुरु चरणों में समर्पित हो रहा हूँ। ये चरण अब कभी नहीं छूटेंगे। जिसे गुरु बनाया है वह गुरु ही है। जैसे गुरु शिष्य की परीक्षा करके स्वीकारता है वह योग्य है या नहीं, उसी प्रकार शिष्यता स्वीकार करने के पूर्व दीक्षार्थी के लिए भी वृद्ध जनों से ज्ञान करके ही गुरु स्वीकारना चाहिए। जिसे स्वीकारा है फिर छोड़ने की आवश्यकता नहीं, इसलिए साधक के लिए सर्वप्रथम योग्य गुरु की खोज करना अनिवार्य है। कैसे आचार्य भगवन्त से दीक्षा धारण करना चाहिए प्रवचनसार जी में कहा है-

समणं गणिं गुणड्ढं कुलरूववयोविसिट्ठमिट्ठदरं।

प्रवचनसार/३/३

भावार्थ- जो उत्तम कुल में उत्पन्न हुआ है उसकी सब लोग नि:शंक होते हुए सेवा करते हैं। जो उत्तम कुलोत्पन्न होगा उसके कुल की परिपाटी से ही क्रूर भावादिक दोषों का अभाव निश्चय से होगा। इसलिए कुल की विशेषता होते हुए ही आचार्य होते हैं, आचार्य के बाहर से रूप की विशेषता ऐसी है कि देखने से उनमें अंतरंग की शुद्ध अनुभव मुद्रा पायी जाती है, तो भी बाहर के शुद्ध रूप कर मानों अंतरंग की बतलायी जा रही है। इस कारण रूप की विशेषता कर सहित होते हैं तथा वय (उम्र) करके विशेषता इस तरह है कि बाल, वृद्ध अवस्था में बुद्धि की विकलता से रहित हैं तथा युवावस्था में कामविकार से बुद्धि की विकलता होती है, उससे भी रहित हैं। ऐसी अवस्था की विशेषता लिए हुए आचार्य कहे गये हैं और समस्त सिद्धांतोक्त मुनि की क्रिया के आचरण करने तथा कराने में जो कभी भी पीछे दोष हुआ हो, उसको बतलानेवाले हैं, गुणों का उपदेश करने वाले हैं, इसलिए अत्यंत प्रिय हैं साथ ही परनिंदा, स्वप्रशंसा, लोकेषणा, शिष्येषणा रहित आचार्य भगवन्त होते हैं इत्यादि अनेक गुणों कर शोभायमान जो आचार्य हैं, उनके पास जाकर भव्यवर मुमुक्षु जीव को नमस्कार करके प्रार्थना करना चाहिये- ''हे प्रभो ! मैं संसार से भयभीत हुआ हूँ सो मुझे शुद्धात्म तत्त्व की सिद्धि हेतु दीक्षा प्रदान करें।''

तब आचार्य कहते हैं कि तुझे शुद्धात्मतत्व की सिद्धि कराने वाली यह भगवती दीक्षा है, ऐसा कहकर वह मुमुक्षु आचार्य से कृपायुक्त किया जाता है। जिन आचार्य भगवन्त ने पूर्व में स्वगुरु से प्रायश्चित्त लिया है तथा अन्य साधुवर्ग को देते हुए देखा है, गुरु परम्परा तथा आर्ष आगम परम्परा के ज्ञाता हैं, कुशल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनुशासक, रहस्य ग्रंथों को समाचीन जानकार, साम्य स्वभावी लोभादि कषायों से परे, नि:संग, नि:स्पृह वृत्ति के धारक आत्महित वांच्छक, दृढसंकल्पी, विचारशील, कानों के पक्के, निर्भीक, गम्भीर, समताशील, सहनशील, समानता चर्या में रखने वाले ऐसे आचार्य के चरणों में ही प्रव्रज्या धारण करना चाहिए, अन्य के यहाँ नहीं। साथ ही पूज्य आचार्य भगवन्तों के लिए चाहिए कि भगवान् जिनेन्द्रदेव के स्वरूप को प्रदान करने में भावुकता का परिचय न दें।

एक पाषाण की प्रतिमा को भगवान् बनाने के लिए कितना विचार करना पड़ता है! यही अवस्था दीक्षार्थी के विषय में समझना चाहिए। आचार ग्रन्थों में स्पष्ट दीक्षायोग्य पात्रों का वर्णन है। योग्यता देखकर ही दीक्षा प्रदान करना चाहिए। संख्या बढ़ाने के साथ संयम, एवं आगमज्ञता भी बढ़ाना चाहिए। दीक्षार्थी के अन्दर लोकाचार है या लोकोत्तराचार, आध्यात्मिकता है या भौतिकता, वैराग्य भाव है या भावुकता है, आत्मप्रभावना, धर्म प्रभावना की दृष्टि है या देह प्रभावना की, जिन शासन को कलंकित तो नहीं करेगा, इन बातों को ध्यान में रखते हुए यह भी देखे कि गुरु के प्रति श्रद्धा-विश्वास कितना है। १. (प्रथम लक्षण) शिष्य की गुरु में भक्ति है २. भव से भयभीत ३. विनयशीलता ४. धार्मिकता ५. शांत स्वभाव, नि:स्पृहता, शिष्टाचार-परायणता ये अनिवार्य गुण हैं। ऐसे श्रेष्ठ गुणों से युक्त व्यक्ति को शिष्य बनाना श्रेष्ठ है, परन्तु गुण हीनों के गुरु बनना श्रेष्ठ नहीं है।

जो दीक्षा के पूर्व ही अपने लोकाचार की भावना प्रकट कर रहा हो, आगम के विपरीत चर्या की ओर जा रहा हो, पद प्रतिष्ठा की शर्त रख रहा हो, यहाँ तक कि दीक्षा लेने के पूर्व ही गुरु-भक्ति-विहीन हो, ऐसा दीक्षार्थी क्या आत्म कल्याण करेगा? क्या धर्मगुरु के यश को वर्धमानता दिला पायेगा?

इस प्रकार के पात्र को दीक्षा के अयोग्य ही समझना चाहिए। जिनदीक्षा धारण करने वाले व्यक्ति के मन, वचन, काय की शुद्धि का होना परम आवश्यक है। त्रयशुद्धि के अभाव में वह साधक न स्वकल्याण ही कर सकेगा, न परकल्याण। जिन शासन की प्रभावना बनाये रखने हेतु दीक्षादायकों के लिए दीक्षार्थी की त्रयशुद्धि पर दृष्टिपात करना चाहिए।

मनोवृत्ति निर्मल है तो चारित्र भी निर्मल होगा। चित्त की शुद्धि ही चारित्र की शुद्धि है। जिसका चित्त अशुद्ध है उसका चारित्र कितना शुद्ध होगा? सर्वज्ञ के ज्ञान का विषय है, फिर भी बहिरंग आचरण को देखकर अंतरंग परिणामों का आचार्य परमेष्ठी अनुमान लगा लेते हैं। वचन शुद्धि से तात्पर्य दीक्षार्थी की भाषा, मृदुल, गंभीर, वैराग्यसम्पन्न होना चाहिए। सारगर्भित हो, जो अभद्रों के अंदर भी भद्रता उत्पन्न करा दे। वंचना रहित भाषा साधक पुरुषों की हुआ करती है। साथ ही हास्यमिश्रित, सावद्य, कर्कश, मर्मभेदी, ग्रामीण भाषा का प्रयोग नहीं होना चाहिए। साधक की भाषा अनुवीचि भाषा हुआ करती है। अनुवीचिभाषा का अर्थ आगम में, शास्त्रसन्दर्भित भाषा कहा है। वाणी संयम, जिनमुद्रा स्वीकार करने वाले के लिए अनिवार्य है, यह भेष तीर्थेश का है, गणधर भगवन्तों के द्वारा भी स्तुत्य है। कोई सामान्य नट, भट का भेष नहीं है। साधु का मौन ही सर्वश्रेष्ठ आभूषण है। यदि मौन नहीं रख सकते, तो सत्य धर्म, भाषा समिति का पालन अवश्य ही होना चाहिए। सज्जनों की परीक्षा वचनों से ही होती है अत: वचन संयम होना आवश्यक है। वचन के उपरांत आगम में कायशुद्धि का वर्णन है। जिनदीक्षा धारण करनेवाले की देहशुद्धि अनिवार्य है।

आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी ने प्रवचन सार जी में जिनदीक्षा धारण करने वाले पुरुष के शरीर कुल आदि का कथन किया है - वे जानते हैं दीक्षा देना उतना श्रेष्ठ नहीं है अपितु जिन आगम की आज्ञा का पालन करते हुए योग्य पात्र को देना महत्वशाली है। जिसके माध्यम से जिनशासन में किसी भी प्रकार का विकार न उत्पन्न होने पाए। श्रेष्ठ कुल में उत्पन्न हुए व्यक्ति ही जिन दीक्षा के पात्र होते हैं।

दीक्षार्थी के लिए कल्याणांग होना अतिआवश्यक है, यानि कि निरोग शरीर होना चाहिए। शरीर में किसी भी प्रकार का रोग हो तो सर्वप्रथम उसका उपचार करा लेना चाहिए, जिससे कि संयम पथ में किसी भी प्रकार का गति-अवरोध न रहे। एक सामान्य सर्विस में जाने वाले व्यक्ति का शरीरपरीक्षण होता है, तब यह तो मोक्ष मार्ग की सर्विस है। रोगी व्यक्ति कों न दीक्षा लेनी चाहिए, न दीक्षादायक को देनी चाहिए। हाँ यदि अन्तिम समय सल्लेखना की अवस्था हो, भाव निर्मल हो, उस समय दीक्षां अवश्य ही धारण करनी चाहिए।

जो अतिबाल, वृद्ध, मानसिक-विकलांग हो, वह जिनदीक्षा का पात्र नहीं है। जो उग्र तप करने में, उपसर्ग, परिषह सहन करने में समर्थ हो उसी अवस्था में निर्ग्रन्थ-निष्क्रमणता को प्राप्त करना चाहिए। साधु अवस्था को प्राप्त करके प्रसन्नचित्त रहना चाहिए, हीन दीन जैसा मुख नहीं करना चाहिए। यदि साधना का आनंद होगा तो मुख मलीन हो ही नहीं सकता, मुख मलीन है तो वह अंतरंग अशुद्धता का प्रतीक ही समझना चाहिए अत: साधक के लिए प्रमुदितमन होना चाहिए।

कुल, लोक में दुराचार-अपवाद रहित होना चाहिए। यदि अंग में ऐसा कोई विकार हो, जो जिन मुद्रा में बाधक हो तो उसे क्षुल्लक, ऐलक दीक्षा ही धारण करनी चाहिए, मुनि दीक्षा धारण करने की अनधिकृत चेष्टा न करे। मुनि बनना उतना श्रेष्ठ नहीं, जितना कि आगम-आज्ञा-पालन श्रेष्ठ है। भावनाएँ निर्मल रखे, अपने कर्मों के विपाक का चिन्तवन करे। मेरे अशुभ कर्म का उदय है जो कि हमें निर्दोष शरीर की प्राप्ति नहीं हुई, परन्तु खिन्नता को प्राप्त न हों, ऐसा सम्यक् पुरुषार्थ करे। पुन: निर्दोष देह को प्राप्त कर संयम साधना कर विदेही अवस्था को प्राप्त हो जाये, इस प्रकार चिन्तवन करना चाहिये तथा जिन्होंने निर्दोष अवस्था को

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्राप्त किया है उन्हें शीघ्र संयम पथ पर गमन कर देना चाहिए। क्या मालूम पुनः यह अवस्था प्राप्त हुई या नहीं। जैनेश्वरी दीक्षा स्वेच्छाचार से परे हुआ करती है, यह भेष आत्महितार्थ ही स्वीकार किया जाता है। परहित हो जाए सहजता में तो कोई निषेध भी नहीं है, परन्तु सर्वथा परहित में लगे रहना निज हित को छोड़कर, इसे जिनागम स्वीकार नहीं करेगा, जिनदीक्षा चैतन्य-मालिनी, परमानन्दशालिनी, भगवती आत्मा की प्राप्ति हेतु धारण की जाती है। जिनभेष प्रचार के लिए नहीं आचार के लिए स्वीकार किया जाता है, इसे धारण कर इच्छाओं की पूर्ति में नहीं लगाना, अपितु इच्छाओं का निरोध करना है।

अहो! धन्य हैं वे जीव, जिन्होंने कलिकाल में भी मुनि मुद्रा को स्वीकारा है। संसार में इन्द्रियभोगों के लिए अनेक भेष हैं परन्तु आत्म सुख के उपभोग का एक मात्र निर्ग्रन्थ भेष है। ऐसी पावन मुद्रा को प्राप्त कर ख्याति, लाभ, पूजा, प्रतिष्ठा में नहीं लगाना चाहिए। मुनि मुद्रा को प्राप्त करके भी यदि किसी ने उसके विपरीत आचरण किया, तो वह तीव्र कर्मास्रव करके दुर्गति का पात्र होगा, वह जिनदर्शन का शत्रु है। कारण यह है कि हीन आचरण को देखकर जन समूह की आस्थाएँ शिथिल हो जायेंगी जैन मुनियों के प्रति। अतः मेरा उन परम पूज्यपाद आचार्य भगवन्तों के चरणों में त्रयभक्तिपूर्वक नमोस्तु निवेदित है कि स्वपर कल्याणी जैन दीक्षा सुपात्र को ही प्रदान करें, अपात्र को त्रिलोकपूज्य मुद्रा प्रदान न करें। पुनः उन बड़भागी जीवों की वंदना करता हूँ, जिन्होंने भोगों की ज्वाला से बचकर आत्मयोग को धारण किया है, जिनमुद्रा स्वीकार कर श्रमण संस्कृति की परम्परा को अग्रिम जीवन्त रूप प्रदान किया है। ऐसे सम्पूर्ण वीतराग, निर्दोष, संयमाराधक, श्रमण संतों के चरणों में नमोस्तु तथा पूज्यपाद गुरुदेव के चरणों की वंदना करता हूँ, जिनके प्रसाद से यह निर्ग्रन्थ अवस्था मुझे प्राप्त हुई।

रहीम के रत्न

जो रहीम उत्तम प्रकृत, का करि सके कुसंग।
चन्दन विष व्यापत नहीं, लपटे रहत भुजंग॥

जो विषया संतन तजी, मूढ़ ताहि लपटाय।
ज्यों नर डारत वमन कर, स्वान स्वाद सों खाय॥

जो रहीम गति दीप की, कुल कपूत गति सोय।
बारे उजियारो लगै, बढ़े अँधेरो होय॥

जो रहीम गति दीप की, सुत सपूत की सोय।
बड़ो उजेरो तेहि रहे, गए अँधेरो होय॥

धन थोरो इज्जत बड़ी, कह रहीम का बात।
जैसे कुल की कुलबधू, चिथड़न माँह समात॥

प्रीतम छबि नैनन बसी, पर छबि कहाँ समाय।
भरी सराय रहीम लखि, पथिक आप फिर जाय॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अज्ञान-निवृत्ति

पं. माणिकचन्द जैन, न्यायाचार्य

श्रीयुत बाबू नेमीचन्द जी वकील, सहारनपुर ने केवलज्ञान के फलविषय में एक प्रश्न पूछा है, जिसका उत्तर दूसरे जिज्ञासुओं के लाभार्थ प्रश्नसहित नीचे दिया जाता है –

प्रश्न – केवलज्ञान का फल अज्ञान की निवृत्ति हो जाना प्रथम क्षण में तो ठीक जँचता है, क्योंकि बारहवें गुणस्थान के अन्त में अज्ञान है, केवलज्ञान ने उत्पन्न होकर उस अज्ञान की निवृत्ति की, किन्तु द्वितीयादि क्षणों में केवलज्ञानों का फल अज्ञान-निवृत्ति क्यों माना जाय? जबकि वहाँ कोई अज्ञान अवशेष ही नहीं है?

उत्तर – पाँचों प्रमाणज्ञानों और भले ही तीनों कुज्ञानों को मिला लिया जाय, आठों ही ज्ञान सदा अज्ञानकी निवृत्ति करते ही रहते हैं, जैसे अग्नि सदा ही निकटवर्ती योग्य शीतका निवारण करती रहती है, अथवा सूर्य हमेशा तिरछा पचास हजार, ऊपर सौ योजन और नीचे १८०० योजन क्षेत्र के अन्धकार को मेटता रहता है। उदयकाल का सूर्य हो या दोपहर का, उसको शक्तिपूर्वक यह तमोनिवृत्ति करनी ही पड़ेगी। एक सैकिण्ड की भी ढील कर देने पर राक्षसोपम अंधकार तत्काल आ धमकेगा।

अज्ञान-निवृत्ति करते रहना ज्ञान का प्राण है। इसी से आचार्य महोदय ने ''अज्ञाननिवृत्तिर्हानोपादानोपेक्षाश्च फलम्'' (परीक्षामुख)

उपेक्षाफलमाद्यस्य शेषस्यादानहानधीः।
पूर्वावाऽज्ञाननाशो वा सर्वस्यास्य स्वगोचरे॥ आप्तमी.

इस प्रकार के वाक्यों द्वारा अज्ञान निवृत्ति को प्रमाण का साक्षात् फल माना है।

समकालीन उपज रहे दो पदार्थों में भी कार्यकारण भाव बन जाता है। जैसा कि अमृतचन्द्र सूरि के निम्न वाक्यसे प्रकट है-

कारण-कार्य-विधानं समकालजायमानयोरपि हि।
दीपप्रकाशयोरिव... (पुरुषार्थसिद्ध्युपाय ३४)।

किसी भी ज्ञानद्वारा तत्क्षण अज्ञान की निवृत्ति अवश्य हो जाती है। तभी तो केवलज्ञानी के अज्ञानभाव का होना असंभव है। योग्यता को टाला नहीं जा सकता।

यदि द्रव्यार्थिकनय या निश्चयनय एकेन्द्रियको सिद्ध समान कहते हैं, तो सिद्धों को भी शक्तिरूप से एकेन्द्रिय हो जाने की योग्यता कह देने में उनको क्या संकोच हो सकता है? बात यह है कि जो कार्य नहीं हो रहा है उसको रोकने के लिये दृढ़ बाँध बँध रहे हैं ऐसा मानना ही पड़ेगा। लवणसमुद्र का पानी जो ग्यारह हजार अथवा सोलह हजार योजन उठा हुआ है, यदि मचल जाय तो जम्बूद्वीप का खोज खो जाय। किन्तु ''न भूतो न भावी न वा वर्तमानः।'' पानी को वहीं डटा हुआ रखने के लिये अंतरंग स्तम्भनशक्ति और बहिरंग वेलंधर देवों के मजबूत नगर व्यवस्थित हो रहे मानने पड़ते हैं। धर्मद्रव्य कालत्रय में अधर्म नहीं हो सकता है। सर्वार्थसिद्धि के देव या लौकान्तिक देव भविष्य में नारकी या तिर्यंच पर्यायको नहीं पा सकते हैं। रूप-गुण कालान्तर में रस-गुण नहीं हो सकता है। आज महापद्म का जन्म नहीं होता है। इन सब कार्यों के लिये अनेक प्रागभाव, अन्योन्या भाव और अत्यन्ता भाव की बलवत्तर भीतें खड़ी हुई हैं। बनारसी दलालों के समान ये सब व्यक्त-अव्यक्त रूप से साथ लगे हुए हैं। अगुरुलघु-गुण भी अन्य व्यावृत्तियों के करने में अनुक्षण अड़कर जुटा हुआ है।

''सर्वात्मकं तदेकं स्यादन्याऽपोहव्यतिक्रमे।''

आप्तमीमांसा

इत्यादि आचार्य वाक्य भी इसी बात को पुष्ट करते हैं। छेदोपस्थापना-संयम के मर्मस्पर्शी विद्वान् इस तत्त्व को शीघ्र समझ जावेंगे। यों केवलज्ञान को सर्वदा अज्ञाननिवृत्ति करनी पड़ती है। श्री माणिक्यनन्दी, विद्यानन्द स्वामी और प्रभाचन्द्र ने अनेक युक्तियों से अज्ञाननिवृत्ति को ज्ञान से अभिन्न ही बतलाया है और सिद्ध किया है। पहिले क्षण का दीपक और लगातार घन्टों तक जल रही मध्यवर्ती दीपक की लौ भी उस तमोनिवृत्तिको सतत करते ही रहते हैं। यदि मध्यवर्ती द्वितीयादि क्षणों में तमोनिवृत्ति न हो तो वही निविड़तम तम आ धमकेगा। अतः प्रकाशस्वभाव तमोनिवृत्तिकी तरह स्वार्थनिर्णीति-स्वभाव ही अज्ञाननिवृत्ति है।

महान् नरपुङ्गवों में भी कुकर्म करने की योग्यता है, परन्तु अपने स्वभावों के अनुसार महान् पुरुषार्थ करते हुये उन पाप कर्मों से बचे रहते हैं। पुरुषार्थ में ढील हो जाने से माघनन्दी और द्वीपायन मुनि अपने ब्रह्मचर्य और क्षमाभाव से स्खलित हो गये थे। श्री अकलंकदेव ने अष्टशती में ''यावन्ति पररूपाणि, प्रत्येकं तावन्तस्तत: परावृत्तिलक्षणा: स्वभावभेदा: प्रतिक्षणं प्रत्येतव्या:'' इत्यादि प्रमाणों द्वारा वस्तुतत्त्वको पुष्ट किया है। अभावात्मक धर्मों के जौहरों का अन्तः निरीक्षण कीजिये।

तत्त्वों का केवलज्ञान और अज्ञान दोनों परस्पर में व्यवच्छेद रूप धर्म हैं। दोनों में से किसी एक का विधान कर देने पर शेष का निषेध स्वतः हो जाता है। केवल ज्ञान के स्वीकार के साथ लगे हाथ ही अज्ञान निवृत्ति न मानने पर ''वदतो व्याघात'' दोष आता है। अतः केवलज्ञान का अज्ञाननिवृत्ति होना शाश्वत अनिवार्य फल है। भावात्मक कारण, कार्यों में भले ही क्षणभेद हो। किन्तु प्रतिबन्धकाभावरूप कारण और प्रागभाव-निवृत्त्यात्मक कार्य इन कारण कार्यों में क्षणभेद नहीं है। प्रकरण में ज्ञानावरणक्षय (केवलज्ञान) और अज्ञाननिवृत्ति में क्षणभेद नहीं है। दोनों का समय एक है और दोनों एक ही हैं।

'अनेकान्त' वर्ष ६ से साभार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्यक्चारित्र की उपादेयता

डॉ. श्रेयांस कुमार जैन

मोक्ष के साक्षात् उपायों में चारित्र का सर्वातिशायी महत्त्व है। अभिप्राय के सम्यक् अथवा मिथ्या होने से चारित्र सम्यक् या मिथ्या हो जाता है। सम्यक्चारित्र मुक्तिलाभ कराता है और मिथ्याचारित्र अनन्त संसार का वर्द्धन कराने वाला है। चारित्र में सम्यक्पना सम्यग्दर्शन के द्वारा ही आता है। सम्यक्त्व चारित्ररूपी महल की नींव है। नींव जितनी मजबूत होती है, प्रासाद उतना ही स्थिर होता है, वैसे ही सम्यग्दर्शन जितना सुदृढ़ होगा उतना ही साधक का चारित्र स्थिर होगा। चारित्र एक विराट् वृक्ष है तो सम्यक्त्व उसका मूल है। मूल के अभाव में वृक्ष चिरस्थायी नहीं रह सकता, आँधी और तूफान में वह धराशायी हो जाता है। उसी प्रकार सम्यग्दर्शन के अभाव में चारित्र की निर्मलता नहीं हो सकती है। सम्यग्दर्शन के सुदृढ़ होने पर सम्यक्चारित्र की उत्पत्ति ही नहीं होती, वरन् विकास भी होता है। सम्यक्चारित्र का अर्थ समझने के पूर्व चारित्र की व्युत्पत्ति आदि को जानना भी आवश्यक है।

तत्त्वार्थ की प्रतीति के अनुसार क्रिया करना चरण या चारित्र कहलाता है, अर्थात् मन, वचन, काय से शुभ कार्यों में प्रवृत्ति करना चरण है। आचार्य पूज्यपाद ने सर्वार्थसिद्धि में लिखा है- **'चरति चर्यतेऽनेन चरणमात्रं वा चारित्रम्।'** जो आचरण करता है अथवा जिसके द्वारा आचरण किया जाता है अथवा आचरण करना मात्र चारित्र है। भगवती आराधना में कहा है **'चरति याति तेन हितप्राप्तिः अहितनिवारणञ्चेति चारित्रम्'** जिससे हित को प्राप्त करते हैं और अहित का निवारण करते हैं उसको चारित्र कहते हैं अथवा **'चर्यते सेव्यते सज्जनैरिति वा चारित्रम् सामायिकादिकम्'** सज्जन जिसका आचरण करते हैं, वह चारित्र है। इस प्रकार शब्द का विशेष अर्थ और महत्त्व जानकर चारित्र की परिभाषा पर विचार करना अपेक्षित है, सो आचार्य श्री समन्तभद्र स्वामी द्वारा प्रतिपादित चारित्र का स्वरूप प्रस्तुत किया जा रहा है-

हिंसानृतचौर्येभ्यो मैथुनसेवापरिग्रहाभ्याञ्च।
पापप्रणालिकाभ्यो विरतिः संज्ञस्य चारित्रम्॥

रत्नकरण्डश्रावकाचार ४९

हिंसा, असत्य, चौर्य, मैथुनसेवन और परिग्रह इन पाँचों पापों की भावात्मक प्रणालिकाओं - क्रोध, मान, माया, लोभ, मोहादि सतत प्रवाहित कुभावों से विरक्त होना चारित्र कहा जाता है, जिसका आचरण सम्यग्ज्ञानी मानव करता है।

चारित्र की प्राप्ति ही मानव जीवन की सार्थकता है। चारित्र ही वास्तव में धर्म है, जैसा कि आचार्य श्री कुन्दकुन्द स्वामी ने कहा है-

चारित्तं खलु धम्मो धम्मो जो सो समोत्ति णिद्दिट्ठो।
मोहक्खोहविहीणो परिणामो अप्पणो हु समो॥

प्रवचनसार गाथा ७

चारित्र वास्तव में धर्म है और जो धर्म है, वह साम्य है, ऐसा जिनेन्द्रदेव द्वारा कहा गया है। साम्य ही यथार्थतः मोह और क्षोभरहित आत्मा का परिणाम है।

आचार्य अमृतचन्द्र स्वामी भी चारित्र की महत्ता बतलाते हुए कहते हैं-

चारित्रं भवति यतः समस्तसावद्ययोगपरिहरणात्।
सकलकषायविमुक्तं विशदमुदासीनमात्मरूपं तत्॥

पुरुषार्थसिद्ध्युपाय ३९

कारण यह है कि समस्त पाप युक्त योगों के दूर करने से चारित्र होता है। वह चारित्र समस्त कषायों से रहित होता है, निर्मल होता है। जो राग-द्वेष रहित वीतराग होता है, वह चारित्र आत्मा का परिणाम होता है।

यहाँ आत्मा में लीनता का मुख्य हेतु सम्यक्चारित्र को ही बताया गया है। चारित्र के सम्यक्पने में मुख्य भूमिका सम्यग्दर्शन की होती है, क्योंकि सम्यग्दर्शन के बिना सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र की उत्पत्ति नहीं होती है, जैसा कि जिनशासन की महती प्रभावना करने वाले आचार्य श्री समन्तभद्रस्वामी ने कहा है-

विद्यावृत्तस्य संभूतिस्थितिवृद्धिफलोदयाः।
न सन्त्यसति सम्यक्त्वे बीजाभावे तरोरिव॥

रत्नकरण्डश्रावकाचार ३९

जिस प्रकार बीज के बिना वृक्ष की उत्पत्ति नहीं हो सकती, उसी प्रकार सम्यग्दर्शन के बिना सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र की उत्पत्ति, स्थिति, वृद्धि नहीं होती है।

सम्यग्दर्शन को तो कर्णधार ही स्वीकार किया है, उन्होंने कहा है-

दर्शनज्ञानचारित्रात्साधिमानमुपाश्नुते।
दर्शनं कर्णधारं तन्मोक्षमार्गे प्रचक्ष्यते॥

रत्नकरण्डश्रावकाचार ३६

जिस प्रकार किसी भी नाव का जलाशय के उस पार जाना खेवटिया के अधीन होता है, उसी प्रकार संसारी जीव का संसार समुद्र को पार करना सम्यग्दर्शन के अधीन होता है।

मोक्षमार्ग में ज्ञान और चारित्र का कम महत्त्व नहीं है, किन्तु इनमें सम्यक्पना सम्यक्त्व से ही आता है, जैसा आचार्य श्री अमृतचन्द्रसूरि ने कहा है-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तत्रादौ सम्यक्त्वं समुपाश्रयणीयमखिलयत्नेन।
तस्मिन्सत्येव यतो भवति ज्ञानं चारित्रञ्च॥

पुरुषार्थसिद्ध्युपाय २१

रत्नत्रयरूपी मोक्षमार्ग में सर्वप्रथम सम्यग्दर्शन का अखिल प्रयत्न पूर्वक आश्रय लेना चाहिए क्योंकि सम्यग्दर्शन के होने पर ही ज्ञान एवं चारित्र सम्यक् बनते हैं। तीनों के सम्यक् होने पर ही मोक्षमार्ग प्रशस्त होता है।

सम्यग्दर्शन के समान सम्यग्ज्ञान का महत्त्व चारित्र पालन में है, क्योंकि सम्यक्चारित्र में सम्यग्ज्ञान की आवश्यकता है। जैसा कि पुरुषार्थसिद्ध्युपाय में कहा भी है-

नहि सम्यग्व्यपदेशं चारित्रमज्ञानपूर्वकं लभते।
ज्ञानान्तरमुक्तं चारित्राराधनं तस्मात्॥३८॥

अर्थात्/अज्ञानपूर्वक चारित्र सम्यक्भाव/समीचीनता को निश्चयरूप से प्राप्त नहीं होता है, इसलिए चारित्र का आराधन ज्ञान के पश्चात् करने को कहा गया है। ज्ञानपूर्वक की गई क्रिया ही कार्यकारी है। अज्ञानी की क्रियाएँ तो बन्ध की ही कारण हैं। इस विषय में आचार्य शुभचन्द्र ने बहुत अच्छा कहा है-संसार में जिस मार्ग से अज्ञानी संचार करता है, उसी मार्ग से तत्त्वज्ञ भी संचार करता है, फिर भी अज्ञानी जीव अपने को कर्म से लिप्त करता है और ज्ञानी अपने को कर्म से मुक्त करता है। हाँ, ज्ञानी और अज्ञानी के आचरण में समानता के होने पर भी ज्ञानी का वह आचरण विवेकपूर्वक होने से संवर और निर्जरा का कारण होता है तथा वही अज्ञानी का आचरण अविवेक पूर्वक होने से कर्मबन्ध का कारण है। (ज्ञानार्णव २१/७)

आचार्य श्री अमृतचन्द्र स्वामी ने तो मोक्ष के हेतुओं में ज्ञान को बहुत अधिक महत्त्व दिया है। वे समयसार की गाथा १५३ की टीका में लिखते हैं- ''ज्ञान के अभाव में अज्ञानियों में अन्तरंग व्रत, नियम, सदाचरण, तप आदि होते हुए भी मोक्ष नहीं है, क्योंकि अज्ञान ही बन्ध का हेतु है'' इस कथन से स्पष्ट है कि दर्शन और चारित्र के समान ही ज्ञान का महत्त्व है। यदि दर्शन और चारित्र से शून्य ज्ञान है तो उसका कोई अर्थ नहीं होता, क्योंकि आचरणविहीन अनेक शास्त्रों का मर्मज्ञ विज्ञ भी संसार समुद्र से पार नहीं हो सकता। जैसे एक चक्र से रथ नहीं चल सकता, एक पंख से पक्षी आकाश में उड़ नहीं सकता, वैसे ही अकेले ज्ञान से मुक्ति लाभ हो नहीं सकता। ज्ञान के साथ चारित्र होगा तभी मुक्ति मिलेगी। वास्तविक ज्ञान आचरण में मूर्त्त रूप लेता है, जो ज्ञान चारित्र में नहीं बदलता, केवल तत्त्वचर्चा एवं वाद-विवाद या उपदेश तक ही सीमित रहता है, वह साध्य की सिद्धि करने वाला नहीं होता। ज्ञान के साथ चारित्र का सुमेल ही साधना करानेवाला और मुक्तिरमा का वरण कराने वाला होता है। अतः यह निश्चय से जानना चाहिए कि चारित्र परमसाध्य की सिद्धि के लिए आवश्यक ही नहीं अपितु अनिवार्य है।

उपाचार्य (रीडर) संस्कृत विभाग
दिगम्बर जैन कॉलिज, बड़ौत

आदर्शकथा

न्याय की तुला

इंगलैण्ड की बात है। वहाँ उस समय चतुर्थ हैनरी राज्य करता था। पाँचवाँ हैनरी युवराज के पद पर था। एक बार युवराज का नौकर किसी अपराध में पकड़ा गया और युवराज के उसे छुड़ाने का प्रयत्न करने पर भी उसको दण्डित कर दिया। इस पर युवराज क्रुद्ध होकर अदालत गया, लेकिन न्यायाधीश ने कहा, ''अगर आप नौकर को छुड़ाना ही चाहते हैं, तो सम्राट् से क्षमा की प्रार्थना कीजिये। मैं इसे नहीं छोड़ सकता।''

यह सुनकर युवराज आग-बबूला हो गया और अपराधी को जबरदस्ती छुड़वाने के लिए आगे बढ़ा। उसकी इस हरकत पर न्यायाधीश ने उसे अदालत से बाहर निकल जाने का आदेश दिया।

अब तो युवराज आपे से बाहर हो गया। वह न्यायाधीश की कुर्सी की ओर झपटा। लेकिन कुछ कदम बढ़ने पर सहसा रुक गया। न्यायाधीश बड़ी गंभीर और कठोर मुद्रा में उसकी ओर देख रहा था। उसने कहा, ''युवराज, मैं न्याय के आसन पर बैठा हूँ। अतः न्याय की मर्यादा की रक्षा करना मेरा धर्म है। आपको भविष्य में जिस प्रजा पर शासन करना है, वह कानून का आदर करे, इसके लिए आपको स्वयं वैसा आचरण करना चाहिए। आपने कानून का उल्लंघन किया है और अदालत की तौहीन की है, इसलिए मैं आपको कैद की सजा देता हूँ।''

अब युवराज को होश आया। उसे अपने किये पर पश्चात्ताप हुआ और बिना आपत्ति किये वह जेल चला गया।

जब सम्राट् को इसका पता चला, तो उसे बड़ा हर्ष हुआ। उसने कहा, ''कानून की रक्षा करने वाला ऐसा न्यायाधीश जिस राज्य में है, वह वास्तव में सुखी है और वह राजा भी सुखी है, जिसका पुत्र कानून की अवहेलना करने पर दण्ड भरने के लिए जेल चला जाता है।''

यशपाल जैन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्यक्त्व-मणि : रानी रेवती

डॉ. नीलम जैन

रानी रेवती धर्मपरायणा ऐसी रमणी-प्रमुख है, जो श्राविका होते हुए भी साधुवर्ग में भी अपने विवेक और सद्ज्ञान के कारण प्रशंसित एवं चर्चित रहीं। सम्यग्दर्शन के आठ अंगों की कथाओं में अमूढ़ दृष्टि अंग के विश्लेषण एवं विवेचन की कथा का केंद्र रानी रेवती ही हैं।

रानी रेवती की उत्कृष्ट कथा का सारांश इस प्रकार है- एक बार क्षुल्लक चंद्रप्रभ तीर्थाटन की आज्ञा हेतु आचार्य जी से कहते हैं- ''गुरुवर मैं यात्रा के लिए जा रहा हूँ, क्या आपको कुछ समाचार तो किसी के लिए नहीं कहना है?''

गुप्ताचार्य बोले - मथुरा में एक सूरत नाम के ज्ञानी और गुणी मुनिराज को नमस्कार और सम्यग्दृष्टिनी धर्मात्मा रेवती के लिए मेरी धर्मवृद्धि कहना।

एक आचार्यश्री द्वारा एक श्राविका को धर्मवृद्धि - क्षुल्लक जी के मन में रेवती के चरित्र की परीक्षण-जिज्ञासा उद्भूत हुई। उन्होंने अपने विद्याबल से ब्रह्मा का रूप बनाया। कमल पर विराजमान ब्रह्मा के दर्शनार्थ सभी गए, लेकिन रानी नहीं गई, पति के बार-बार कहने पर भी रानी रेवती ने राजा से कहा- यह ब्रह्मा कोई धूर्त ही हो सकता है। जिस ब्रह्मा की वन्दना के लिए आप जा रहे हैं, वह ब्रह्मा नहीं हैं। ब्रह्मा इस प्रकार यत्र तत्र नहीं आ जाते।

दूसरे दिन क्षुल्लक ने गरुड़ पर बैठे हुए चतुर्बाहु शंख, चक्र, गदा आदि से युक्त और दैत्यों को कंपाने वाले विष्णु भगवान् का रूप धारण कर दक्षिण दिशा में डेरा जमाया। रेवती ने तब भी उसके पास जाने से राजा को रोक दिया। स्वयं भी नहीं गई, क्षुल्लक की यह विधि भी निष्फल रही, चूँकि वह तो रेवती रानी की परीक्षा लेना चाहते थे। रानी के पति वरुण भी मायाजाल से प्रभावित हो गए थे। उन्होने रानी रेवती से कहा-रानी कल ब्रह्मा थे, नहीं गईं, आज तो चलो साक्षात् नारायण आ रहे है। रानी ने दो टूक उत्तर दिया- 'राजन ! यह भी कोई मायावी ही है। इसकी पूजा अज्ञानी और पांखडी ही करेंगे। यह केशव या नारायण नहीं है। हमारे आगम में बताया है कि नव नारायण पहले हुए हैं, वे अब यहाँ कहाँ से आयेंगे ?' रानी की बात सुनकर राजा आश्चर्य में पड़ गया।

क्षुल्लक रानी रेवती को आया हुआ न देखकर फिर निराश हुआ। तीसरे दिन उस बुद्धिमान क्षुल्लक ने बैल पर स्थित पार्वती एवं गणपति युक्त शिव का रूप धारण किया। रानी रेवती ने पुनः आगम प्रमाण देते हुए कहा हे राजन्! आगम में ग्यारह रुद्रों का वर्णन है। वे रुद्र आज से लाखों वर्ष पूर्व हो चुके हैं। इस काल में रुद्र नहीं आ सकते । यह कोई मायाधारी व्यन्तर या विधाधर ही हैं। क्षुल्लक फिर मन मार कर रह गया। अगले दिन उसने अष्टप्रातिहार्यों से युक्त समवशरण बनाया और भगवान् महावीर का रूप धारण किया। भगवान् के आगमन और समवशरण की बात राजा के कानों में भी पड़ी। इस बार फिर राजा ने सहजता से कहा ''रानी ! अब तो चलो इष्ट देव वर्द्धमान स्वामी का समवशरण आया है, अतः आप दर्शन हेतु चलें।'' रानी ने अब पूर्णतया दृढ़ता से कहा- ''राजन ! कैवल्यश्री को प्राप्त किए हुए जिनेन्द्र इस काल में कहाँ से आयेंगे ? जो भगवान निर्वाण प्राप्त कर चुके हैं, वे पुनः धरा पर नहीं आ सकते।'' आज राजा को रेवती रानी के वचनों ने निरुत्तर कर दिया। वह भी सोचने लगे बात तो ठीक है, वास्तव में २५ वाँ तीर्थंकर कहाँ से आयेगा? राजा फिर ऊहापोह में पड़ जाते हैं। कहते हैं- ''सभी लोग मिथ्या दृष्टि हैं। सब तो इन्हें महावीर समझ कर पूजा कर रहे हैं।'' ''स्वामिन् जैसे सभी पुष्पों में फल नहीं लगते सभी वृक्ष चन्दन नहीं होते, सभी नारियाँ सती नहीं होतीं इसी प्रकार सभी व्यक्ति समयग्दृष्टि नहीं होते। जिसे देव शास्त्र, गुरु का सच्चा श्रद्धान है, वह कभी कपट-जाल में नहीं फँस सकता,'' रेवती ने विनम्रतापूर्वक कहा। राजा प्रजा सभी इस तीर्थंकर के पास श्रद्धापूर्वक गए लेकिन सम्यक् भाव से भूषित रानी रेवती ने दृढ़ता पूर्वक कह दिया- ''**तीर्थंकर चौबीस ही हुए हैं, चौबीस ही होंगे और चौबीस ही हैं उनकी संख्या भंग करने वाले पच्चीसवें तीर्थंकर कहाँ से आ सकते हैं? यह कोई मायावी ऐन्द्रजालिक ही हो सकता है।**''

अब भी रानी को आता हुआ न देख क्षुल्लक रानी की स्थिरप्रज्ञता को समझ गया। अब उसने अपनी माया समेटी और यथावत् क्षुल्लक का रूप धारण किया। रानी ने अब उसके क्षुल्लक रूप को भली भांति निरखा परखा और सही समझकर उसका पड़ गाहन किया तथा चौके में ले गई। क्षुल्लक ने रानी को सम्यदृष्टि समझा तथा अपना वास्तविक रूप प्रकट कर मुनि गुप्ताचार्य का आशीर्वाद कहा। अन्ततः क्षुल्लक ने अनेक प्रकार की व्याधियों से युक्त अत्यन्त मलिन वेश बनाया और रेवती के घर भिक्षा हेतु पहुँचे। आँगन में पहुँचते ही वे मूर्च्छित हो गए। उन्हें देखते ही धर्मवत्सला रेवती बड़ी भक्ति और विनय पूर्वक परिचर्या में लीन हो गई और प्रासुक आहार कराया।

क्षुल्लक को अब भी सन्तुष्टि नहीं हुई और उन्होंने वहीं अत्यधिक दुर्गन्ध युक्त वमन कर दिया। क्षुल्लक जी की यह स्थिति देख रेवती द्रवित हो गई। उसने यही पश्चाताप किया कि मेरे द्वारा आहार में असावधानी हो गई है। पश्चाताप के अश्रु बहाती हुई रेवती ने उनका शरीर पौंछा, गरम जल से साफ किया। उनकी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वैय्यावृति की।

रेवती रानी की श्रद्धा भक्ति देख क्षुल्लक हर्ष विभोर हो गए और अपनी माया समेट कर रोमांचित हो बोले- ''देवि ! संसार श्रेष्ठ मेरे परम गुरु महाराज गुप्ताचार्य की धर्मवृद्धि तेरे मन को पवित्र करे। तुमने जिस भवसागर-तारक अमूढ दृष्टि अंग को ग्रहण किया है वह सम्यक्त्व प्रशंसनीय है।'' गुणवती रानी रेवती को आशीर्वाद देकर क्षुल्लक विहार कर गए। इसके बाद वरुण नृपति और रेवती रानी ने काफी समय गृहस्थ जीवन सुख पूर्वक व्यतीत किया। एक दिन राजा को किसी कारण वैराग्य हो गया। वे अपने शिवकीर्ति पुत्र को राज्य सौंप कर साधु बन गए। आयु के अन्त में समाधिमरण कर माहेन्द्र स्वर्ग में जाकर देव हुए। रेवती रानी ने सुव्रता नामक आर्यिका से दीक्षा ग्रहण की और तपकर सन्यास पूर्वक मरण किया। रेवती अखिल जैन नारी समाज की गतिदिशा में नव परिवर्तन की सूत्रधारिणी है। इन्होंने नारीत्व गौरव और धर्म के मौलिक तत्त्वों के आत्मिक समीकरण से एक माडल तैयार किया है। सम्यदर्शन के बिना मुक्ति नहीं, उसी सम्यग्दर्शन के आठ अंगों में एक अंग रानी रेवती का पर्याय वन गया है। ऐसी धर्मशीला कर्मवीरा नारी ने काफी गहनता से अपने व्यक्तित्व का सुखद निर्माण किया था अत: विजित रही। नारी धर्म, जिन श्रद्धा और सेवाव्रत के प्रति दृढ रह कर यह सांध्य तारा की भांति अपनी डगर पर एकाकी चलती रही। स्वयं उसने अपने नारीत्व को जागृत रखा, जाज्वल्यमान, दीप्ति पूर्ण, आभा पूर्ण उर्जस्विता बनकर रानी रेवती जगतपूज्या बनी।

इस प्रकार रानी रेवती ने जगविख्यात दोषारोपण को भी निर्मूल किया कि महिलाओं में मिथ्यात्वबुद्धि अधिक होती है, सांसारिक सुखों की अभिलाषा में वे ढोंग, पाखण्ड, क्रिया काण्ड को सहजता से ग्रहण कर लेती हैं। घर-परिवार के अनिष्ट की आशंका से वे कुमार्गरत हो जाती हैं। **दृढ़ता एवं सकंल्प शक्ति की धनी, प्रकृत्या धीरा वीरा गंभीर रेवती तरला, सुशीला नारी के रूप में महिला समाज का गौरव हैं, साथ ही ऐसी प्रथम महिला भी जिसने अपने जीवनकाल में जिन वचनों में श्रद्धा को अभिव्यक्त किया था, साधु समाज द्वारा समादृत हुई ऐसी श्राविकारत्न रेवती प्रथम-पांक्तेय अनुपम एवं विशिष्ट रमणी-रत्न हैं।**

अपने पौरुष से नारी की गौरवान्वित महत्ता को प्रतिष्ठापित करने वाली ये ऐसी जागृत महिला हैं, जिसने श्राविकाओं के स्वरूप को उज्ज्वल, स्निग्ध, मनोरम तथा पुण्य काया पल्लवित, पुष्पित और पवित्र बनाया। अन्तस् की परीक्षा करने की रेवती रानी में अद्भुत क्षमता थी। अपने बल पर जिसकी सुषमा जागृत हुई, वह रानी रेवती ही है। रेवती रानी का चरित्र उज्ज्वल, शांत, सरल, उदात्त, प्रभापूर्ण, जाज्वल्यमान है। यह वह जागृत महिला है जिसने गृहस्थ जीवन में रहते हुए अपने व्यक्तित्व का सौरभ चुतर्दिक् फहराया। इनका व्यक्तित्व प्रत्येक रूप में हृदय के तार को छूता है, छेड़ता है और अपने साथ रमा लेता है। नारीत्व-साधना का विकास अपने सामर्थ्य से अपने बल बूते पर करने वाली सचमुच रेवती नर-पूजिता है। इस अद्भुत नारी ने अपने धर्म, नारीत्व, साधना, ब्रहमचर्य की शक्ति से युगनारी को प्रभावित किया, चिर अखण्ड, चिरअनन्त, चिर महान, युगविभूति, युग वाणी को नव स्वर दिया।

के.एच.-२१६ कविनगर, गाजियाबाद

आचार्य श्री विद्यासागर के सुभाषित

- **ज्ञानरूपी दीपक में संयमरूपी चिमनी आवश्यक है, अन्यथा वह रागद्वेष की हवा से बुझ जायेगा।**
- **दीपक लेकर चलने पर भी चरण तो अन्धकार में ही चलते हैं। जब चरण भी प्रकाशित होंगे, तब केलवज्ञान प्रकट होगा।**
- **स्वस्थ ज्ञान का नाम ध्यान है और अस्वस्थ ज्ञान का नाम विज्ञान।**
- **ज्ञान स्वयं में सुखद है, किन्तु जब वह मद के रूप में विकृत हो जाता है, तब घातक बन जाता है।**
- **जीवन में ज्ञान का प्रयोजन मात्र क्षयोपशम में वृद्धि नहीं, वरन् विवेक में भी वृद्धि हो।**

'सागर बूँद समाय' से उद्धृत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चाँदखेड़ी के अतिशय क्षेत्र से महाअतिशय क्षेत्र बनने तक एक वृत्तान्त

सतीश जैन इंजीनियर

चांदखेड़ी महाअतिशय क्षेत्र दिगंबर जैन समाज का अति प्राचीन एवं प्रसिद्ध तीर्थ क्षेत्र है, जो कि राजस्थान प्रांत के झालावाड़ जिले में स्थित है। यह क्षेत्र मध्यप्रदेश की सीमा के अधिक करीब है एवं गुना से ... कि.मी. है। अटरू और वारा रेल्वे स्टेशनों से क्षेत्र की दूरी 40 कि.मी. है। चांदखेड़ी क्षेत्र से जुड़ा हुआ कस्बा खानपुर है। जैन समाज खानपुर में ही निवास करता है। इस क्षेत्र पर एक विशाल भव्य एवं मनोहारी मंदिर निर्मित है जिसके गुफा तल में लाल पाषाण के महाअतिशयकारी आदिनाथ भगवान् पद्मासन मुद्रा में विराजमान हैं। आदिनाथ भगवान् ही इस क्षेत्र के मूलनायक भगवान् हैं। प्रतिमा की ऊँचाई सवा छः फीट है एवं प्रशस्ति में संवत् 512 अंकित है। इन्हीं आदिनाथ भगवान् को श्रद्धालु चांदखेड़ी के बड़े बाबा के नाम से पुकारते हैं। बड़े बाबा की छबि इतनी मनोज्ञ एवं सजीव है कि दर्शनार्थी दर्शन करते ही भाव-विभोर हो जीवन को धन्य मानने लगते हैं। एक बार भगवान् के सम्मुख दर्शन के लिए बैठ जाने के बाद उठने का विकल्प मन में नहीं आता और प्रतिमा की छबि हृदय में समाती चली जाती है। प्रतिमा को एकटक देखने पर प्रतिमा मुस्कराती एवं साँस लेती हुई नजर आती है। ऐसा लगने लगता है मानो बड़े बाबा भक्त की भक्तिपूर्ण भावनाओं को समझ मुस्कराकर आशीष दे रहे हैं। जो भी साधु या श्रावक प्रथम बार बड़े बाबा के दर्शन करते हैं, सभी एक ही बात कहते हैं कि उन्होंने ऐसी बेजोड़ एवं बेहोड़ प्रतिमा भारत वर्ष में कहीं नहीं देखी, धन्य है वह श्रेष्ठी जिसने ऐसे साक्षात भगवान् बनवाने के भाव किये, निश्चित ही वह कोई भव्य जीव होगा। वह शिल्पी भी धन्य है जिसने अपनी शिल्प साधना से एक अनुपम एवं अकल्पनीय किंतु सत्य रूप प्रकट कर स्वयं को धन्य किया।

गुफातल में ही अतिप्राचीन भगवान् महावीर की अष्टप्रातिहार्य युक्त लाल पाषाण की मनमोहक प्रतिमा विराज मान है। बड़े बाबा के दोनों ओर सफेद पाषाण की कई छोटी-बड़ी मूर्तियाँ विराजमान हैं। अनेकों बार बड़े बाबा की प्रतिमा से अविरल जल की धारा अचानक फूट पड़ने का अतिशय हजारों लोगों ने देखा है। और भी कई अतिशय इस क्षेत्र पर लोगों ने साक्षात देखे हैं। हजारों यात्री पूरे भारत से वर्षभर क्षेत्र पर आते हैं एवं बड़े बाबा के दर्शन, पूजा, अभिषेक से, सातिशय पुण्य का बंध कर अपनी अपनी मनोकामनाओं की पूर्ति पाते हैं।

जिस गुफा में बड़े बाबा विराजमान हैं उसके द्वार इतने छोटे-छोटे हैं कि लोगों को झुककर एवं जमीन में हाथ टेककर ही दरवाजों से आना-जाना पड़ता है। मंदिर के प्रथम तल पर बाहुबली भगवान् मध्य वेदी पर विराजमान हैं एवं अन्य वेदियाँ भी आजू बाजू में हैं। मंदिर की छत पर चार कोनों में बनी चार छतरियाँ मंदिर की भव्यता एवं सुंदरता को अत्यधिक प्रशस्त करती हैं।

मंदिर की प्राचीनता एवं भव्यता मंदिर की विशिष्ट निर्माण कला से स्पष्ट झलकती है। सघन नक्काशीदार पाषाण के ऊंचे-ऊंचे खंभे, छः-सात फुट मोटी दीवारें, चार-चार फीट ऊँचाई के दरवाजे, कलाकृति युक्त मेहराब आदि सभी कुछ दर्शनीय एवं प्रशंसनीय है। मंदिर के चारों ओर काफी चौड़ा आंगन है एवं आंगन से लगकर तीन ओर बड़ी दो मंजिला धर्मशाला का निर्माण है। 50 कमरों की एक नवीन धर्मशाला का निर्माण कार्य गतवर्ष पूरा हो चुका है जिसमें सभी कमरे बड़े एवं सुविधाजनक हैं। मंदिर के उत्तर में मंदिर परिसर से लगकर बहती हुई रूपली नदी ऐसी लगती है मानो बड़े बाबा के चरण छूने ही उसने अपना स्थान चुना हो। उत्तर दिशा में ही एक बड़ा प्रवेश द्वार बना हुआ था, जिसे लगभग 250 वर्ष पूर्व सुरक्षा की दृष्टि से बंद कर दिया गया था। मंदिर के चारों ओर घने बड़े-बड़े कई फलदार वृक्ष लगे हुए हैं जिनसे भी यह क्षेत्र और अधिक शोभा पाता है। मंदिर एवं धर्मशाला की छतों पर सुबहशाम कई-कई मयूर प्रतिदिन नृत्य करते हुए देखे जाते हैं। मुख्य मंदिर के पीछे ही नवीन समोशरण मंदिर बना हुआ है। इस चांदखेड़ी महाअतिशय क्षेत्र पर जिसका कि कण-कण पूज्य एवं अतिशय युक्त है, साधु संत आते रहते हैं एवं चौमासा कर बड़े बाबा के चरणों में अपनी साधना को बढ़ाते हैं।

मूलनायक आदिनाथ भगवान् एवं मंदिर के इतिहास के बारे में जानकारी मिलती है कि बड़े बाबा की प्रतिमा चांदखेड़ी क्षेत्र से छह मील दूर शेरगढ़ की बारहपाटी पर्वत माला के एक हिस्से में जमीन में दबी हुई थी। कोटा स्टेट के तात्कालिक दीवान सेठ किशनदास जी, जो कि सांगोद के निवासी थे उन्हें एक रात बड़े बाबा की प्रतिमा का स्पप्न आया। वे स्वप्न के अनुसार प्रतिमा को बैलगाड़ी पर सांगोद ले जा रहे थे कि रूपली नदी के किनारे एक टेक पर बैलगाड़ी रुक गई एवं बैल पछाड़ खा गये। दूसरे कई जोड़ी बैलों के द्वारा गाड़ी को खींचने का प्रयास किया गया, परन्तु सफलता नहीं मिली। अंत में सेठ किशनदास जी ने उसी स्थान पर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नदी के किनारे बड़े बाबा को विराजमान करवाकर इस चमत्कारी गुफाओं से युक्त भव्य मंदिर का निर्माण करवाया। मंदिर का निर्माण कार्य चार वर्ष (संवत् 1742 से 1746) तक चला। सेठ किशनदास जी ने ही भव्य पंचकल्याणक एवं प्रतिष्ठा महोत्सव का आयोजन प्रमुख प्रतिष्ठाचार्य आमेर गद्दी के भट्टारक श्री जगत कीर्ति के सान्निध्य में उत्साह पूर्वक करावाया जिसका अंतिम चरण संवत 1746 माघसुदी छठ सोमवार को सानंद सम्पन्न हुआ। मंदिर के बाहर दीवार पर सैकड़ों वर्ष से लगे प्रशस्ति पाषाण पर लिखा हुआ है कि जनश्रुति के अनुसार मंदिर के नीचे बनी किसी गुफा में रत्नमयी चंद्रप्रभु भगवान् की प्रतिमा है। मंदिर की सारी जमीन, संपत्ति आदि भी ब्रिटिश कालीन दस्तावेजों के अनुसार श्री चंद्रप्रभु दिगम्बर जैन मंदिर के नाम से है। परन्तु वर्तमान में चंद्रप्रभु भगवान् की ऐसी कोई भी बड़ी या प्राचीन प्रतिमा मंदिर जी में दर्शनार्थ विराजमान नहीं थी, जिसके आधार पर यह निश्चित किया जा सके कि दस्तावेजों में मंदिर का नाम श्री चंद्रप्रभु दिगम्बर जैन मंदिर उसी मूर्ति के आधार पर रखा गया होगा। इससे यह संकेत मिलता रहा कि निश्चित ही मंदिर में कहीं चंद्रप्रभु भगवान् की कोई विशिष्ट प्रतिमा छिपी हुई होना चाहिए। पूर्व में क्षेत्र पर आचार्य देशभूषण जी महाराज, आचार्य विमल सागर जी महाराज एवं आचार्य कल्याण सागर जी महाराज आदि कई निमित्तज्ञानी साधु पधारे एवं सभी ने यही बताया कि इस मंदिर के भूगर्भ में कई जिनबिंब हैं। परंतु कोई भी साधु इन जिनबिम्बों को निकाल नहीं पाये और न ही साहस कर पाये, पर सभी ने यही कहा कि भविष्य में कोई महान् तपस्वी बालयति साधु इस क्षेत्र पर आयेगा और वही इन भूगर्भ में स्थित प्रतिमाओं को निकालकर लायेगा। सारा समाज ऐसे किसी परम तपस्वी साधु का इंतजार करने लगा जो उन प्रतिमाओं को दर्शनार्थ निकाल पायेगा। कितनी ही पीढ़िया चंद्रप्रभु भगवान् के दर्शन की मनोकामना लिये संसार से विदा हो गई। पर कुछ लोग जिनका पुण्य प्रबल था इंतजार की घड़ियाँ गिन रहे थे।

चंद्रप्रभु भगवान् के दर्शनों के पिपासु लोगों को अपनी मनोकामना साकार होने की एक झलक परम पूज्य मुनिपुंगव श्री सुधासागर जी महाराज की उत्कृष्ट साधना में दिखाई दी। चांदखेड़ी क्षेत्र कमेटी पूज्य मुनि श्री सुधासागर जी महाराज, जो कि वर्तमान के श्रेष्ठ संतशिरोमणि आचार्य 108 विद्यासागर जी महाराज के परम मेधावी शिष्य हैं, उनके चरणों में पिछले दो तीन वर्षों से कई-कई बार चांदखेड़ी क्षेत्र पर पधारने का निवेदन कर रही थी। पूज्य सुधासागर जी महाराज जो कि अपनी कठोर तपस्या, उत्कृष्ट साधना, प्रभावी एवं ओजस्वी प्रवचनशैली, आगम के गहन ज्ञाता, सरल स्वभावी, तीर्थजीर्णोद्धारक, वास्तु -विशेषज्ञ, मूर्तिप्रमाण-पारंगत आदि कई अन्य विशेषताओं के लिए पूरे भारत में जाने जाते हैं, गतवर्ष यानि सन् 2001 में कोटा में चातुर्मास कर रहे थे। क्षेत्र कमेटी ने कोटा चातुर्मास के दौरान मुनिश्री से चांदखेड़ी अतिशय क्षेत्र पर पधारने के लिए कई बार निवेदन किया। भक्तों के पुण्य का उदय हुआ और मुनिश्री सुधासागर जी महाराज 15 जनवरी सन् 2002 को चाँदखेड़ी अतिशय क्षेत्र पर पधारे। मुनिश्री का क्षेत्र पर पदार्पण, चाँदखेड़ी अतिशय क्षेत्र का चाँदखेड़ी महाअतिशय क्षेत्र बनने का मंगलाचरण था। मुनिश्री के चाँदखेड़ी पहुँचने पर खानपुर, अशोक नगर, गुना आदि के जैन समाज, मुंगावली दिव्यघोष मंडल एवं क्षेत्र के सभी पदाधिकारी एवं सदस्यों ने अभूतपूर्व, ऐतिहासिक अगवानी की। मुनिश्री ने बड़े बाबा के दर्शन किये, तो वे चमत्कृत हुए बिना न रहे पाये एवं कहने लगे कि ऐसे अलौकिक जीवंत भगवान् के दर्शन उन्होंने जीवन में पहली बार किये हैं। मुनिश्री के मन में विचार आया कि जिस क्षेत्र पर ऐसे अद्वितीय साक्षात् आदिनाथ भगवान् विराजमान हैं, वह क्षेत्र इतना पिछड़ा क्यों है? मुनिश्री ने तुरंत ही क्षेत्र के वास्तु स्वरूप पर विचार करना प्रारंभ कर दिया, तदनुसार अनेक दोष क्षेत्र के निर्माण कार्यों में पाये। वास्तु दोषों में सबसे पहला एवं महत्त्वपूर्ण दोष यह पाया कि क्षेत्र का प्रवेश द्वार दक्षिण दिशा में खुला हुआ है जो कि यम का द्वार कहलाता है। इसी कारण क्षेत्र यथोचित विकास नहीं कर पा रहा है। मुनिश्री ने क्षेत्र पर पदार्पण के कुछ दिन बाद ही इस दक्षिण मुखी द्वार को बंद कर उत्तर की ओर बने विशाल द्वार, जो कि 250 वर्ष पूर्व बंद कर दिया गया था, उसको अविलंब खोजने की बात कमेटी एवं समाज के सम्मुख रख दी एवं इस कार्य को करने के लिए मात्र एक दिन का समय निर्धारित किया। कुछ लोगों ने बंद दरवाजे में भूत-प्रेत एवं देवी देवताओं के होने की बात मुनिश्री से कही एवं कुछ लोगों ने कहा कि इतने कम समय में यह काम संभव नहीं है। तब मुनिश्री सुधासागर जी, जो कि सदा से ही असंभव कामों को संभव करते आये हैं एवं जिनके नाम से ही देवी-देवता कोषों दूर भागते हैं, उन्होंने समाज एवं कमेटी को आशीर्वाद देकर उत्साह का ऐसा संचार कर दिया कि एक ही दिन में दक्षिण दिशावाला यम द्वार पूर्णत: बंद कर उत्तर दिशा का द्वार जो कि कुबेर का द्वार कहलाता है, खोल दिया गया। कुबेर का द्वार खुलते ही ऐसा लगा मानों धन की वर्षा करने कुबेर स्वयं अपना खजाना लेकर चाँदखेड़ी में उतर आया हो। मुनिश्री ने अपने प्रवचन में कहा कि अब कुबेर का द्वार खुल गया है, अब इस क्षेत्र का विकास आसमान की ऊँचाई को छुयेगा एवं यह क्षेत्र विश्व के नक्शे पर चमकने लगेगा। हजारों की संख्या में उपस्थित लोगों ने बड़ी उदारता से एक ही दिन में लाखों रुपये का दान क्षेत्र के विकास के लिए दिया। उत्तरदिशा के द्वार खुलने का कार्य चाँदखेड़ी के अतिशय क्षेत्र से महाअतिशय क्षेत्र बनने का प्रथम चरण था। इसके बाद क्षेत्र पर अतिशयों की शृंखला शुरु हो गई।

जैसा कि भारत वर्ष का समूचा जैन समाज जानता है कि मुनिपुंगव श्री सुधासागर जी महाराज ने ही सन् 1994 में सांगानेर के संघी जैन मंदिर में भूगर्भ स्थित चैत्यालय को निकाला था,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गये तो यक्ष सर्प रूप में महाराज श्री को मिला। इस गुफा में चैत्यालय निकालने का अंतराल कम से कम पांच वर्ष का होना जरूरी है, परन्तु मुनिश्री पांच वर्ष के अंतराल के पूर्व ही गुफा में चले गये थे फिर भी अपनी प्रबल इच्छा शक्ति एवं अपूर्व धर्म साधना से चैत्यालय को गुफा से बाहर श्रद्धालुओं के लिए दर्शनार्थ निकाल कर लाये थे। यह चैत्यालय पहले भी परमपूज्य आचार्य शांति सागर जी महाराज, देशभूषण जी महाराज एवं अन्य दो-तीन मुनि महाराज भूगर्भ से बाहर ला चुके थे। परन्तु 20 जून सन् 1999 में मुनिश्री सुधासागर जी महाराज भूगर्भ के चतुर्थ तल से पहलीबार एक रत्नमयी चतुर्थकालीन अद्वितीय चैत्यालय पूर्ववर्ती चैत्यालय के साथ लेकर आये जिसमें सभी प्रकार के अमूल्य रत्नों के लगभग एक सौ एक जिनबिम्ब थे। लाखों करोड़ों लोगों ने चैत्यालय के दर्शन, अभिषेक से अपना जीवन धन्य किया। इस बार भी वही यक्ष सर्प रूप में महाराज श्री को मिला एवं मुनिश्री के दोनों पैरों के बीच से इस प्रकार निकला मानों मुनिश्री की तपस्या एवं साधना को नमोस्तु कर गया हो।

संघी जैन मंदिर में मुनिश्री के पदार्पण के पूर्व सभी मूर्तियों पर धूल चढ़ रही थी, कोई दर्शन करने भी नहीं आता था। मंदिर में मात्र चार पांच सौ रुपये की सिलक थी, पर मुनिश्री ने मंदिर के सारे वास्तु दोषों को दूर करवाया जिससे आज यह मंदिर एक अतिशय क्षेत्र के रूप में सारे भारत में जाना जाने लगा है। कई वर्षों से कई नये निर्माण कार्य चल रहे हैं एवं मंदिर में लाखों रुपये का ध्रुव फंड निर्मित हो गया है। सैकड़ों यात्री रोज ही दर्शन के लिए यहाँ पहुँचते हैं। यह सब मुनिश्री की तपश्चर्या का ही प्रताप है, जो वे यक्षों से भी सामना करने का साहस कर लेते हैं।

सांगानेर के पूर्व मुनिश्री सुधासागर जी महाराज जिस क्षेत्र पर पहुँचे, चाहे वह देवगढ़, बजरंगगढ़, सीरोनजी, सिरोंज, नसिया, बैनाड़, भव्योदय (रैवासा), ललितपुर क्षेत्रपाल जी, अशोक नगर, सुदर्शनोदय आवां, अजमेर, नारेली आदि कोई भी क्षेत्र हो सभी का जीर्णोद्धार इस तरह कराया है कि सब कुछ कल्पना के परे लगता है। सारे क्षेत्र अपने पुराने वैभव को प्राप्त हुए लगने लगे हैं। **मुनिश्री की कल्पना शक्ति, दूरदृष्टि एवं अगाध चिंतन ने सभी तीर्थक्षेत्रों के पुरातत्त्व को बरकरार रखते हुए इतना उन्नत एवं व्यवस्थित करा दिया है कि अब ये क्षेत्र जो जीर्णता की कगार पर थे, अब हजारों साल तक धर्मानुरागियों का जीवन धन्य करते रहेंगे।** जिन लोगों ने देवगढ़ अतिशय क्षेत्र के दर्शन जीर्णोद्धार के पहले एवं बाद में किये होंगे वे मुनि श्री सुधासागर जी महाराज का गुणगान करते नहीं थकते एवं मुनिश्री की कृतज्ञता को जीवन भर नहीं भूल सकते। मुनिश्री ने कई महीनों तक दिन-दिन भर पहाड़ी पर रहकर एक एक मूर्ति को यथोचित स्थान दिया है एवं मंदिरों की जमीन से शिखर तक मरम्मत करवाई है। यह कार्य किसी अन्य साधु के द्वारा करवा पाना कल्पना के बाहर की बात है।

नारेली स्थित नवीन तीर्थ क्षेत्र "ज्ञानोदय" जो कि एक बहु उद्देशीय तीर्थ क्षेत्र के रूप में मुनिश्री सुधासागर जी महाराज के गंभीर, दूरदर्शी, एवं विस्तृत चिंतन का मूर्तरूप है, अजमेर से 8 कि.मी. दूर किशनगढ़ मुख्य हाइवे पर स्थित है। बहुत ऊँचे एवं लंबे पर्वत पर लाल पत्थर के चौबीस भव्य जिनालय, पर्वत पर ही अष्ट धातु की आदिनाथ, भरत एवं बाहुबली भगवान् की विशाल खड़गासन प्रतिमायें विराजमान एवं बहुत बड़े आकार का सहस्रकूट चैत्यालय, पर्वत के नीचे महावीर भगवान् का अलग एक बहुत बड़ा जिनालय (जिसके निर्माता श्री आर.के.मार्बल्स) हजारों पशुओं की क्षमता वाली गोशाला, औषधालय, स्कूल, बड़ी-बड़ी धर्मशालायें, संत निवास, बड़े-बड़े पार्क एवं घने वृक्षोंवाला यह क्षेत्र पूरे भारत में अपने स्वरूप का एक मात्र तीर्थ है। पर्वत पर बने लाइन से 24 उत्तुंग मंदिरों से क्षेत्र की सुंदरता कई गुनी दिखाई देती है। पर्वत पर जाने के लिए सुविधाजनक सीढ़ियाँ बनी हुई हैं एवं वाहन के द्वारा भी पर्वत पर जाया जा सकता है। क्षेत्र के अपने कई वाहन हैं, जो यात्रियों की सुविधा के लिए उपयोग में लाये जाते हैं। यह क्षेत्र दि. जैन समाज के लिए मुनिश्री की महान देन है।

क्रमशः ...

विषयासक्तचित्तानां गुणः को वा न नश्यति।
न वैदुष्यं न मानुष्यं नाभिजात्यं न सत्यवाक्॥

अर्थ - विषयसक्त मनुष्य के प्रायः सभी गुणों का नाश हो जाता है। उसमें न वैदुष्य बचता है, न मनुष्यता, न कुलीनता और न सत्य।

पराराधनजाद् दैन्यात् पैशुन्यात् परिवादतः।
पराभवात्किमन्येभ्यो, न बिभेति हि कामुकः॥

अर्थ- कासासक्त मनुष्य दूसरे की खुशामद से उत्पन्न दीनता, चुगली, निन्दा और तिरस्कार से भी नहीं डरता, तब अन्य बातों से डरने की तो बात ही दूर।

'क्षत्रचूडामणि'

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संयुक्त परिवार का अर्थशास्त्र एवं समाज शास्त्र

श्री प्रमोद शर्मा (सी.ए.)

देश अनेक भीषण समस्याओं से रूबरू है। शायद बेरोजगारी इस प्रजातंत्र के इतिहास में अपने चरम पर है। उद्योग जगत मंदी की मार से कृशकाय हो गया है, चारों ओर भूख, गरीबी, अशिक्षा, जनसंख्या-वृद्धि, भ्रष्टाचार एवं कानून-व्यवस्था जैसे विकराल दानव मुँह फैलाए खड़े है। सरकारें अपने बोझ और अंतर्निहित विरोधाभासों के चलते जनता के सिर पर रखी गठरियाँ हो गई हैं एवं जन समस्याओं की वृद्धि एवं उसके फैलाव में समय-समय पर अपना योगदान देकर अपनी क्रूर उपस्थिति का एहसास कराती रहती हैं। यह तथ्य भलीभाँति समझ लेना होगा कि सरकारी कुप्रबंध एवं फिजूखर्ची की कठोर कीमत आखिर नागरिकों को ही चुकानी होती है।

अचरज की बात यह है कि इतनी सारी समस्याओं के बीच भी हम पूर्ण धैर्य के साथ जीवित हैं, चलताऊ ढंग से प्रसन्न भी हैं। कुल मिलाकर अपना वक्त ठीक-ठाक कट रहा। विचारणीय विषय यह है कि इतनी असुविधाओं के बाद भी ऐसी कौन-सी शक्ति, सामर्थ्य एवं विशेषता हमें ऐसा करने के लिये उत्प्रेरित करती है। भारतीय समाज में इस सहनशीलता, आशावादिता, सहिष्णुता एवं गतिशीलता की कुंजी हमारी संयुक्त परिवार प्रथा है। इस प्रणाली ने विदेशी अर्थशास्त्र के विद्वानों द्वारा प्रतिपादित अनेक नियम झूठे साबित कर दिए हैं। यह प्राचीन संस्था अब भी हमारी रक्षा का एक अभेद्य कवच बनी हुई है। यह कल्पना करना भी खौफनाक है कि यदि भारत में संयुक्त परिवार प्रथा न होती तो, यह देश घोर अराजकता की चपेट में होता एवं क्या घटित-दुर्घटित होता, इसको सोचा भी नहीं जा सकता।

इस देश के सुचारु संचालन में संयुक्त परिवार प्रथा का अत्यंत ही महत्त्वपूर्ण योगदान है, जिसके चलते सरकार 'सामाजिक सुरक्षा' जैसे महत्त्वपूर्ण दायित्व से काफी हद तक मुक्त रही है एवं इस मद में व्यय की जाने वाली राशि, जो कि काफी बड़ी होती, सरकार को नहीं करनी पड़ती है। वास्तव में आज देश के सम्मुख जितनी भी समस्याएँ हैं, उनका सामना, हम केवल इसलिये कर पा रहे हैं, कि हम संयुक्त परिवार में रहते हैं। यह संस्था सरकार के लिये वरदान है एवं बेफिक्री का कारण भी है। कभी कुछ विद्वान आम भारतीय पर गैर-जिम्मेदार होने का आरोप भी लगाते रहते हैं, परंतु बड़ा ही सुखद आश्चर्य होता है, जब हम देखते हैं कि किसी संयुक्त परिवार की ओर, जिसमें अमूमन एक या दो सदस्य कामकाजी होते हैं एवं उनकी आय संपूर्ण परिवार के जीवनयापन का, बिना किसी भेदभाव के साधन बनती है। परिवार में तीन पीढ़ियाँ समभाव से उपलब्ध होती हैं एवं आय के सीमित साधनों से बूढ़े माँ-बाप की दवा, इलाज के पैसे, बेरोजगार बच्चों का जेब खर्च, विवाह योग्य कन्या के दहेज का प्रबंध, घर एवं वर की तलाश, यदि स्थिति और भी विकट हो तो विधवा बहू एवं विपत्तिग्रस्त विवाहित लड़की का भी निर्वहन होता है। भारत में यदि विधि का शासन है तो उसकी जननी एवं लागू करने वाली शक्ति संयुक्त परिवार ही है। घर के बड़े परस्पर एवं समाज के अन्य व्यक्तियों के साथ उपजी अनेकानेक कानून एवं व्यवस्था की समस्याओं को एक सुदृढ़ एवं परिपूर्ण न्याय व्यवस्था की तरह चुटकी में सुलझा देते हैं। इस प्रकार संयुक्त परिवार एक अच्छे विद्यालय, स्वास्थ्य केंद्र, परामर्श केंद्र, न्यायालय, सांस्कृतिक रक्षक, मंदिर एवं मस्जिद जैसी अनेकानेक भूमिकाएँ समय-समय पर संपन्न करता है, जहाँ यह सोचना लाजमी है कि यदि पश्चिम के विकसित देशों में पसरी पूर्णतया भौतिक उपभोक्तावादी संस्कृति यदि हमारे देश में पूरी तरह आ गई तो हम शायद पुनः आदम युग में पहुँच जायेंगे। भारत की इस संस्था एवं परम्परा पर हम जितना भी गर्व करें, कम होगा।

यूरोप के तथाकथित विकसित देशों को सामाजिक सुरक्षा के मद में अपने बजट का एक बहुत बड़ा हिस्सा व्यय करना होता है। यह कुछ देशों में 40 से 45 प्रतिशत तक है। यदि भारत के बजट से इतनी बड़ी राशि इस मद में व्यय की जाती, तो हमारी प्राथमिकता पूर्णतया भिन्न होती और सरकार की लंगोट भी न बँध पाती। एक औसत भारतीय को गैर जिम्मेदार एवं अकर्मठ कहना एक सफेद झूठ है और यह प्रचार भारत की छबि को कलंकित करने का भारी षड्यंत्र है। ऐसा सोचनेवाला कोई भी व्यक्ति भारत के संयुक्त परिवार के संचालन एवं समस्याओं से रूबरू होने के उपरांत यह बोलकर तो देखे। पिछले दिनों उपजी सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन की हवा ने देश की संयुक्त परिवार प्रथा को शनैः-शनैः क्षीण किया है। यह ठीक वैसे ही है, जैसे कि औद्योगिक एवं रासायनिक कचरे ने धरती की अस्मिता अर्थात् उसकी ओजोन परत को छिद्र-छिद्र किया है।

औसत भारतीय को जब हम अपने परिवार का संचालन करते हुये देखते हैं, तो अफसोस होता है कि काश यह भावना सत्ता संस्थान में भी उपजी होती और हमारा देश चहुँमुखी प्रगति कर रहा होता। भारत के नागरिकों में राष्ट्रीय चरित्र की कमी है, इस धारणा का प्रत्युत्तर एवं प्रतिवाद भी संयुक्त परिवार प्रथा द्वारा ही मिलता है। सरकार संयुक्त परिवारों के कारण अनेक दायित्वों से मुक्त रही है अतएव ऐसी स्थिति में सरकार एवं नीतिनियंताओं से यह अपेक्षा रखना वाजिब है कि जन-कल्याण हेतु योजना, कानून एवं नियम बनाते समय यथासंभव व्यक्ति आधारित सोच से हटकर भारत की जमीनी सच्चाइयों को आधार बनाया जाये एवं परिवारों के सशक्तिकरण के ईमानदार प्रयास किये जायें। शासकीय नीतियों की दिशा भी इस प्रकार मोड़ना होगी कि इन सबका आधार भारत के परिवारों के अध्ययन पर आधारित हो। ये कार्य अत्यंत दुष्कर भी नहीं हैं, क्योंकि अभी हाल ही में भारत की जनगणना संपन्न हुई है एवं सरकार के पास समस्त आंकड़े भी मौजूद हैं। पश्चिमी देशों के व्यक्ति-आधारित विकास का अंधानुकरण छोड़कर हमें अपनी योजनाएँ हमारी घरेलू परिस्थितियों को दृष्टिगत रखकर बनाना नितांत आवश्यक है।

नवभारत (जबलपुर) 19 मार्च 2002 से साभार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिज्ञासा-समाधान

पं. रतनलाल बैनाड़ा

प्रश्नकर्ता- एस. के जैन सिकन्दरा

प्रश्न- वर्तमान में कुछ प्रवचनकार क्षेत्रपाल पद्मावती आदि को जिनधर्म का आयतन कहते देखे जा रहे हैं। क्या ये वास्तव में जिनधर्म के आयतन हैं स्पष्ट करें?

समाधान - आयतन स्थान को कहते हैं। जो सद्गुणों का स्थान है वही जिनागम में आयतन नाम से प्रसिद्ध है। आचार्य कुन्द-कुन्द ने बोधपाहुड़ गाथा ५, ६, ७ में आयतनों का वर्णन इस प्रकार किया है। गाथा नं. ५ में मन, वचन, काय इन तीनों तथा पंचेन्द्रियों और उनके विषयों को स्वाधीन रखनेवाले मुनियों के रूप को आयतन कहा है। गाथा नं. ६ में क्रोधादिक विकारों में पूर्ण विजय प्राप्त करने वाले पंच महाव्रतों के धारक ऋद्धिधारी मुनियों को आयतन कहा है। तथा गाथा नं. ७ में निर्मल ध्यान से सहित, केवलज्ञान से युक्त गणधर, केवली, सामान्य केवली अथवा तीर्थंकर को सिद्धायतन कहा है। अर्थात् परम वैराग्य से युक्त उपर्युक्त तीन ही जिनधर्म के आयतन हैं।

उपरोक्त गाथाओं के भावार्थ में पूज्य आर्यिका सुपार्श्वमतिजी ने इस प्रकार लिखा है कि "**आयतन का अर्थ है** निवास व धर्मात्मा पुरुषों के आश्रय लेने योग्य स्थान। अर्थात् जिनके आश्रय से सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्रधर्म की वृद्धि हो उनको आयतन कहते हैं। वे धर्मायतन संयमी मुनि व केवली अरिहंत भगवान् ही होते हैं, क्योंकि उनके आश्रय से ही रत्नत्रय की प्राप्ति या वृद्धि होती है। अत: निर्ग्रन्थ लिंगधारी, कषाय-इन्द्रिय-विजेता संयमी एवं केवलज्ञानी को आयतन कहा है। वे आयतन ही वंदना, अर्चना, प्रशंसा करने योग्य हैं, वे ही स्तुत्य, दर्शनीय और वंदनीय हैं। अन्य आरम्भ परिग्रहधारी वंदना स्तुति करने योग्य नहीं हैं।"

श्री मूलाचार गाथा १४६ की टीका में आचार्य वसुनंदि सिद्धांत चक्रवर्ती ने इस प्रकार कहा है-

"लोक में छह आयतन प्रसिद्ध हैं-सर्वज्ञ देव, सर्वज्ञदेव का मंदिर, ज्ञान, ज्ञान से संयुक्त ज्ञानी, चारित्र, चारित्र से युक्त साधु"। ये छह आयतन माने हैं।

द्रव्य संग्रह गाथा ४१ की टीका में ब्रह्मदेव सूरि ने इस प्रकार कहा है- "अब छह अनायतन का कथन करते हैं १. मिथ्यादेव २. मिथ्यादेवों के सेवक ३. मिथ्यातप ४. मिथ्या तपस्वी ५. मिथ्याशास्त्र ६. मिथ्याशास्त्र के धारक पुरुष। इस प्रकार पूर्वोक्त लक्षण के धारक ये छह अनायतन सराग सम्यग्दृष्टियों को त्याग करने होते हैं"। इसी टीका में मिथ्यादृष्टि देवों का वर्णन करते हुये लिखा है। "राग तथा द्वेष से युक्त आर्त तथा रौद्र परिणामों के धारक क्षेत्रपाल, चंडिका आदि मिथ्यादृष्टि देवों को .....उपर्युक्त सभी प्रमाणों के अनुसार क्षेत्रपाल, पद्मावती को धर्म का आयतन किसी भी दृष्टि से कहना उचित नहीं है। यदि इनको जिनधर्मी भी माना जाये, तो ये केवल साधर्मीवत् जयजिनेन्द्र कहकर सम्मान करने तक पात्रतावाले हैं, इससे अधिक नहीं। जिनको अपना सम्यक्त्व निर्मल रखना हो या सम्यक्त्वप्राप्ति के इच्छुक हों उनको चाहिये कि वे रत्नकरण्डकश्रावकाचार श्लोक नं. २३ की टीका में पं. सदासुखदास जी द्वारा लिखित" क्षेत्रपाल पूजन के सम्बन्ध में विचार अवश्य पढ़ें। पंडित सदासुखदास जी के ये विचार एक बार नहीं बल्कि बार-बार पढ़ने के योग्य हैं।

अत: सभी दृष्टियों से क्षेत्रपाल पद्मावती को धर्म का आयतन कदापि नहीं कहा जा सकता।

प्रश्न- णमोकार मंत्र तो आचार्य पुष्पदन्त महाराज द्वारा निबद्ध है परन्तु "एसो पंच णमोयारो" आदि गाथा के रचयिता कौन से आचार्य हैं?

समाधान- "एसो पंच णमोयारो" यह गाथा प्रतिक्रमणपाठ में भी आती है। प्रतिक्रमण पाठ के रचयिता पूज्य आचार्य गौतम गणधर कहे जाते हैं। इस आधार से तो इस गाथा के रचियता पूज्य गौतम गणधर ही हैं। इससे मिलती हुई एक गाथा मूलाचार में गाथा ५१४ इस प्रकार उपलब्ध होती है-

एसो पंच णमोयारो सव्वपावप्पणासणो।
मंगलेसु य सव्वेसु, पढमं हवदि मंगलं॥

यह गाथा 'उक्तं च' लिखकर नहीं कही गयी है अत: इसके रचयिता आचार्य वट्टकेर हैं।

प्रश्न- काल द्रव्य के उपकार में परिणाम तथा क्रिया में क्या अंतर है समझाइये?

समाधान- तत्त्वार्थसूत्र की सर्वार्थसिद्धि टीका में अध्याय ५ सूत्र २२ की टीका के पैरा ५६९ में इस प्रकार कहा गया है-एक धर्म की निवृत्ति करके दूसरे धर्म के पैदा करने रूप परिस्पंद से रहित द्रव्य की जो पर्याय है उसे परिणाम कहते हैं। जैसे - जीव के क्रोधादि, पुद्गल के वर्णादि। इसी प्रकार धर्म, अधर्म, आकाश और काल द्रव्य में परिणाम होता है, जो अगुरुलघु गुणों की वृद्धि और हानि से होता है। क्रिया का वर्णन करते हुये लिखा है कि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्रव्य में जो परिस्पंदरूप परिणमन होता है उसे क्रिया कहते हैं। प्रायोगिक और वैस्रसिक के भेद से वह दो प्रकार की है। उनमें गाड़ी आदि की प्रायोगिक है और मेघादिक की वैस्रसिकी।

सारांश यह है कि जीव में जो क्रोध आदि परिणाम होते हैं अथवा औपशमिक आदि भाव होते हैं या गुणों में अन्य प्रकार परिणमन होता है वह जीव का परिणाम है। पुद्गल में क्रियारहित अवस्था में जो वर्ण आदि का बदल जाना होता है अर्थात् आम के हरे रंग का पीला पड़ जाना, सफेद कपड़े में पीलापन आ जाना, मकान के पाषाणस्तंभ में जीर्णता आ जाना आदि परिणाम हैं। जबकि द्रव्य में जो स्थान से स्थानांतर होने पर परिणमन होता है वह क्रिया है। गेंद का ऊपर उछलना, मशीन का चलना, हाथ पैरों का संकोच विस्तार होना, अंगुली को टेढ़ा सीधा करना, आदि रूप जो परिणमन है उसे क्रिया रूप परिणमन जानना चाहिये।

सारांश में क्रिया रहित वस्तु के परिणमन को परिणाम और क्रिया सहित वस्तु के परिणमन को क्रिया कहते हैं।

प्रश्न कर्त्ता - श्री मनीष कुमार जैन, सहारनपुर

प्रश्न- सौधर्म स्वर्ग का इन्द्र कौन से इन्द्रक विमान में रहता है?

समाधान- स्वर्गों में देवों के विमानों की रचना इस प्रकार है। प्रत्येक पटल के सबसे मध्य में जो एक विमान है उसे इन्द्रक विमान कहते हैं और उसकी चारों दिशाओं में जो श्रेणीबद्ध (पंक्ति बद्ध) विमान हैं उन्हें श्रेणीबद्ध विमान कहते हैं। शेष स्थानों के विमानों को प्रकीर्णक विमान कहा जाता है। इन्द्रक विमान को इन्द्र के निवास के कारण इन्द्रक विमान नहीं कहा जाता। केवल मध्य का विमान होने के कारण इसको इन्द्रक विमान कहते हैं। सौधर्म इन्द्र के निवास के बारे में श्री तिलोयपण्णत्ति अधिकार ८ गाथा ३४१ में इस प्रकार कहा है-

पढमादु एक्कतीसे, पभ-णाम-जुदस्स दक्खिणोलीए।
बत्तीस-सेढिबद्धे, अट्ठारसम्मि चेट्ठदे सक्को ॥३४१॥

अर्थ- प्रथम से इकतीसवें प्रभ नामक इन्द्रक की दक्षिण श्रेणी में बत्तीस श्रेणी बद्धों में से अठारहवें श्रेणीबद्ध विमान में इन्द्र स्थित है।

भावार्थ - सौधर्म ईशान स्वर्ग के ३१ पटल हैं जो एक के ऊपर एक हैं। उनमें से सबसे ऊपर के पटल में दक्षिण श्रेणी में ३२ श्रेणीबद्ध विमान हैं उन श्रेणीबद्धों के १८ वें नम्बर विमान में सौधर्म इन्द्र का निवास है। श्री त्रिलोकसार में गाथा नं. ४८३ में भी इसी प्रकार कथन पाया जाता है।

प्रश्नकर्त्ता - सत्येन्द्र कुमार जैन, रेवाड़ी

प्रश्न-५. देव और नारकियों के आयुबंध-योग्य अपकर्ष काल कब आते हैं?

समाधान- देव और नारकी जीवों का अकालमरण नहीं होता। इनकी आयु के जब अंतिम छह माह बाकी रहते हैं तब आयुबंध-योग्य आठ अपकर्ष काल होते हैं। उन्हीं में इनके आयु बंध होता है।

1/205, प्रोफेसर्स कॉलोनी
आगरा- 282002 (उ.प्र.)

भक्ति जिनने जोड़ ली है

पं. योगेन्द्र दिवाकर

''ईश'' क्या है ? आत्मा क्या है?
और क्या संसार है?
यह समझने पर, नहीं
फिर दूर आत्मोद्धार है।

स्वार्थमय संसार से,
परदा हटा अज्ञान का।
और पथ दिखने लगा,
फिर आत्म के उत्थान का॥

भक्ति जिनने जोड़ ली है,
केवली भगवान् से।
जगमगाते चित्त उनके,
वास्तविक श्रद्धान से॥

दिवाकर निकेतन
सतना (म.प्र.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आचार्य श्री विद्यासागर जी की पूजा

राजेन्द्र 'रमण'

हे परम गुरु विद्यासागर, तुम हो इस जग के दुखहारी।
हो मोक्ष मार्ग के पथदर्शक, हो तीन रतन के तुम धारी॥
थे धन्य मलप्पा पिता और थीं,धन्य श्रीमती महतारी।
हो गया धन्य सदलगा ग्राम, फिर धन्य हुई धरती सारी॥
बाल्य काल से हे गुरुवर, तुम रहे उदासी इस जग से।
कर्मों के क्षय की राह चुनी, फिर डिगे नहीं किंचित् मग से॥
आव्हानन करके हे गुरुवर, मन मंदिर तुम्हें बिठाता हूँ।
तुमको पाकर अपने भीतर, में धन्य-धन्य हो जाता हूँ॥

ऊँ ह्रीं श्री १०८ आचार्य विद्यासागर मुनीन्द्र। अत्र अवतर-अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठ:ठ:। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट्॥

जनम-जनम से इस भव वन में, भटक रहा हूँ, हे गुरुवर।
दिशाहीन हूँ आज न मुझको, राह सूझती है गुरुवर॥
धो देता है सब मैलों को ये नीर परम पावन गुरुवर।
भर हेम पात्र में क्षीर नीर, अर्पित मैं करता हूँ गुरुवर॥

ऊँ ह्रीं श्री १०८ आचार्य विद्यासागर मुनीन्द्राय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

बौराकर सातों व्यसनों में, न सँभल सका हूँ मैं इक पल।
क्रोध मान से मोह लोभ से, झुलस गया है अन्त:स्थल॥
सभी ताप को हर करके, शीतलता देता है चन्दन।
अन्तर का ताप मिटाने को, चन्दन से मैं करता वन्दन॥

ऊँ ह्रीं श्री १०८ आचार्य-विद्यासागरमुनीन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनम् निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट कर्म से बँध करके मैं, जन्म मरण करता आया।
लाख चौरासी योनि में, मैं भवसागर में भटकाया॥
लाया हूँ मैं अक्षत तंदुल, बस अक्षय निधि को पाने को।
पूजा मैं इनसे करता हूँ, भवसागर से तर जाने को॥

ऊँ ह्रीं श्री १०८ आचार्य-विद्यासागरमुनीन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

मन्मथ वाणों से विधा हुआ, कब स्थिर निज मैं हो पाया।
काम-कीच से मलिन हुआ, निज शुचिता को खोता आया॥
निज में निज ही की महक उठे, निज पद को पाने आया हूँ।
तेरे सौरभ से जो महके, वो पुष्प चढ़ाने लाया हूँ॥

ऊँ ह्रीं श्री १०८ आचार्य-विद्यासागरमुनीन्द्राय कामवाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

विकराल अनल ये क्षुधा रही, जो शान्त कभी न हो पायी।
षड्रस व्यंजन के सेवन ने, इसकी ज्वाला ही भड़काई॥
हे गुरुवर एक तुम्हीं औषधि, इस क्षुधा रोग के मेटन को।
जग के सारे उत्तम व्यंजन, मैं लाया तुम ढिग भेंटन को॥

ऊँ ह्रीं श्री १०८ आचार्य-विद्यासागरमुनीन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह-तिमिर में फँस करके, हर क्षण मैंने ठोकर खाई।
निज ज्ञानदीप की अमिट जोत, हे नाथ नहींअब तक पाई॥
बन करके ज्ञानरवि तुमने, इस मोहतिमिर का नाश किया।
मेरा अन्तर हो ज्योतिर्मय, मैंने अब तेरा शरण लिया॥

ऊँ ह्रीं श्री १०८ आचार्य-विद्यासागरमुनीन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

पल-पल कर्मों को बाँध-बाँध, मैंने ही इन्हें बढ़ाया है।
तप की अग्नि से तुमने तो, हर क्षण ही इन्हें नशाया है॥
ये धूप सुवासित तेरे ढिग, मैं आज जलाने आया हूँ।
मेरे भी ऐसे कर्म जलें, बस यही भाव भर लाया हूँ॥

ऊँ ह्रीं श्री १०८ आचार्य-विद्यासागरमुनीन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सब सुन्दर मिष्ठ सुवासित फल, तेरे सम्मुख मैं ले आया।
आतम फल मुझको ही केवल, अब मेरे गुरुवर है भाया॥
हे दया सिन्धु औघड़ दानी, तेरी अनुकम्पा हो जाये।
चलते-चलते तेरे पथ में, फल मुझे मोक्ष का मिल जाए॥

ऊँ ह्रीं श्री १०८ आचार्य-विद्यासागरमुनीन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलम् निर्वपामीति स्वाहा।

अति विनय पूर्ण हो, शीश नवा तेरे सम्मुख अब आऊँ मैं।
मिट जाये मेरे दु:ख सारे, भव सागर से तर जाऊँ मैं॥
द्रव्य सँजो करके आठों, मैं तुमको अर्पित करता हूँ।
तन, मन, धन सारा ही जीवन, मैं तुम्हें समर्पित करता हूँ॥

ऊँ ह्रीं श्री १०८ आचार्य-विद्यासागरमुनीन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जयमाला

अनुपम गुरुवर को पाकर के, सब धन्य स्वयं को पाते हैं।
वो आज हमारे सम्मुख हैं, हम चरणों में झुक जाते हैं॥

जिनका बस ध्यान लगाने से, सब दोष पाप धुल जाते हैं।
जिनका बस ध्यान लगाने से, सब विघ्न आप टल जाते हैं॥
जिनका सुमरन करने से ही, मिट जाते हैं दैनिक दुख भी।
जिनका सुमरन करने से ही, मिल जाते हैं भौतिक सुख भी॥
जिनका चिन्तन भर करने से, सब संचित पाप नशाते हैं।
वो आज हमारे सम्मुख हैं, हम चरणों में झुक जाते हैं॥

जो सत्य अहिंसा की मूरत, करुणा के गहरे सागर हैं।
जो-जो शुचि सुन्दर है जग में, उन सबके ही वो आगर हैं॥
त्यागी भौतिक सुख साधन के, किंचित न पास में हैं रखते।
अनमोल रतन संयम से ही, जो कोटि रवि सम हैं दिपते॥
जिनकी छाया में आकर के, हम सब सद्गुण पा जाते हैं।
वो आज हमारे सम्मुख हैं, हम चरणों में झुक जाते हैं॥

जिनकी छवि है अनुपम सुन्दर, मुस्कान फूल बरसाती है।
मुरझायी ज्ञान लता जिनकी, वाणी सुनकर खिल जाती है॥
तप की अग्नि में तप करके, कुन्दन सी जिनकी है काया।
उन महातपी के चरणों में, नतमस्तक है जग की माया॥
जिनके आभा-मंडल में आ, सब जीव शान्ति पा जाते हैं।
वो आज हमारे सम्मुख हैं, हम चरणों में झुक जाते हैं॥

तीर्थ सनातन अगर बचे, तो ही हम सब बच पायेंगे।
देव, शास्त्र, गुरु संगम में, तब ही डुबकी खा पायेंगे॥
इस ओर सदा चिन्तन जिनका, हैं तीरथ के सद्उद्धारक।
हे पूज्य पुजारी पूजा के, जो बस एक सच्चे संवाहक॥
दो कदम जहाँ भी थम जाते, बस तीर्थ वहाँ बन जाते हैं।
वो आज हमारे सम्मुख हैं, हम चरणों में झुक जाते हैं॥

है नमस्कार हे दीनबन्धु, है नमस्कार हे परमधीर।
है नमस्कार हे कृपासिन्धु, है नमस्कार हे तपोवीर॥
हे मोक्ष प्रदाता नमस्कार, हे शिव-सुख-दाता नमस्कार।
हे शान्तिसुधाकर नमस्कार, हे क्षमादिवाकर नमस्कार॥
हों चिरजीवी गुरुवर अपने, सब यही भावना भाते हैं।
वो आज हमारे सम्मुख है, हम चरणों में झुक जाते हैं॥

दोहा

परम पूज्य गुरू श्रेष्ठ की, पूजा कही बनाए।
जो-जो श्रद्धा से पढ़े, 'रमण' मोक्ष पद पाये॥
बुद्धिहीन होकर गुरु, भक्ति के बस होय।
रवि छूने का कृत्य यह, क्षमा कर दियो मोय॥
महा सिन्धु गुण आपके, है भक्ति मम नाव।
श्रद्धा के पतवार मम, गुरुवर पार लगाव॥
दुर्बल मेरी लेखनी, तब गुण गुरु अनन्त।
तेरे गुण का गान ही, करते रहते सन्त॥

एम.आई.जी.-७४ इन्द्रा काम्प्लेक्स, विदिशा (म.प्र.)

मेरी कविताएँ

डॉ. सुरेन्द्र जैन 'भारती'

अजगर : अज···गर

खा लिया
अजगर ने आज
निरीह, निरपराध अज को
अच्छा होता
यदि कर सकता
विरोध
अज ··· गर॥

कम नहीं

सूखी-सुखी
लूटी-लुटी
छूटी-छुटी
मात्र शब्द
या
उ और ऊ के अन्तर नहीं हैं
बल्कि रखते हैं
बड़ा ही वैचारिक/सामाजिक
महत्त्व
कम नहीं है इनका अन्तर।

भय

राम मरा हो सकता है
मरा राम नहीं हो सकता
'आरक्षण' के भय से।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समाचार

वेदी प्रतिष्ठा एवं कलशारोहण सम्पन्न

औद्योगिक एवं धार्मिक नगरी मदनगंज-किशनगढ़ में नवनिर्मित दो जिनालयों में त्रिदिवसीय १७ से १९ जनवरी तक धार्मिक कार्यक्रम के शुभारम्भ के दौरान प्रथम दिन बयोवृद्ध समाज सेवी व आर.के. मार्बल्स के मुखिया श्री रतनलाल पाटनी द्वारा झण्डारोहण, तत्पश्चात्, घटयात्रा, वेदी शुद्धि सकलीकरण, जाप्य, यागमंडल विधान तथा इन्द्र-इन्द्रानियों के हवन-पूजन के बाद दोनों जिनालयों में वेदी प्रतिष्ठा एवं कलशारोहण महोत्सव धूमधाम से सम्पन्न हुआ।

मुनिपुंगव सुधासागरजी के सान्निध्य में हाऊसिंग बोर्ड स्थित महावीर जिनालय में सैकड़ों धर्मावलम्बियों के जय-जयकारों के बीच आर.के. मार्बल के चैयरमेन श्री अशोक पाटनी द्वारा भगवान् महावीर की प्रतिमा धार्मिक विधिविधानपूर्वक प्रतिष्ठापन के साथ ही जिनालय के गुम्बज पर कलशारोहण किया गया।

श्रीमती सुशीला पाटनी
अध्यक्ष, ज्ञानोदय महिला मण्डल
आर.के. मार्बल्स परिवार, मदनगंज किशनगढ

निरीह मूक पशुओं का वध राष्ट्र की धार्मिक व सांस्कृतिक विरासत का अपमान

किशनगढ़ से विहार करके जयपुर रोड़ स्थित पाटनी फार्म पहुँचने से पूर्व मध्य रास्ते में श्री मदनेश गौशाला परिसर में गोवंश सरंक्षण समिति के तत्त्वावधान में आयोजित एक पशु शिविर के शुभारम्भ समारोह में मुनिश्री सुधासागर जी ने अपने मंगल प्रवचन में कहा कि भारत देश का दुर्भाग्य है कि आज यहाँ सरे आम चल रहे बूचड़ खानों में निरीह मूक पशुओं का वध किया जाकर हमारे राष्ट्र की धार्मिक व सांस्कृतिक विरासत का अपमान किया जा रहा है।

मुनि सुधासागरजी ने पशुधन विशेषकर गायों को सरंक्षण दिए जाने की आवश्यकता पर जोर देते हुए कहा कि चमड़े की वस्तुओं का उपयोग व प्रयोग बन्द करना अब समय की पुकार है। गो-शालाओं के पोषण हेतु ज्यादा कुछ दान-धर्म नहीं वरन मात्र बीडी, गुटका व शराब का सेवन तजकर इसकी राशि को ही अगर हम अर्पण करने का साहस जुटा लेंवे तो किसी भी संस्थान, समाज व सरकार का मोहताज होने की जरूरत ही नहीं पड़ेगी। मगर इस सबके लिए भी संकल्पबद्ध होने की जरूरत है। पशु शिविर शुभारम्भ समारोह के मुख्य अतिथि व जिला कलेक्टर निरंजन आर्य ने कहा कि आज अकाल के कारण पशुधन चारा-पानी की समस्या से बेहाल है। हमारी संस्कृति में गाय को धर्म व मानवता के भाव में पूजनीय स्थान दिया गया है, आज समूचे राज्य में जगह-जगह स्वयं सेवी संस्थाएं व परोपकारी व्यक्ति नि:स्वार्थ रूप से गोवंश के बचाने हेतु भरसक प्रयास कर जीवों के प्रति दया हेतु अग्रणी बने हुए हैं। सरकार भी अपने सीमित संसाधनों के बावजूद अकाल की मार से पीड़ित पशुधन की रक्षार्थ हर सम्भव प्रयास कर रही है। गोशालाओं को गायों के पालन-पोषण हेतु अनुग्रह राशि के बतौर १२ रुपये प्रति पशु के हिसाब से दिया जा रहा है। परन्तु स्वयंसेवी संस्थाओं व समाज के भामाशाहों को अब अधिक उदारता रखनी होगी व प्रयास रहना चाहिए कि चारा-पानी के अभाव को लेकर गायें काल का ग्रास न बनें।

समारोह में समाजसेवी दीपचन्द्र चौधरी ने आर.के. मार्बल्स परिवार की तरफ से मदनेश गोशाला में संचालित पशु शिविर व नारेली ज्ञानोदय तीर्थ क्षेत्र की गोशाला हेतु तीन-तीन लाख रुपये की आर्थिक सहायता देने की घोषणा भी की। इस दौरान किशनगढ़ मार्बल एसोसिएशन की तरफ से अध्यक्ष जयनारायण अग्रवाल ने पशु शिविर की समस्त कार्य व्यवस्थाओं को चलाने हेतु शिविर का सम्पूर्ण खर्चा वहन करने की घोषणा की। समारोह के अन्तर्गत किशनगढ़ नगरपालिका के अध्यक्ष सुरेश दगड़ा ने पालिका की तरफ से आवारा पशुओं के चारा-पानी हेतु सवा लाख रुपयों का चैक जिला कलेक्टर के माध्यम से शिविर समिति को सौंपा। जीव सेवा संस्थान भोपाल की तरफ से पशुओं का मुफ्त चारा उपलब्ध कराए जाने की घोषणा भी हुई। शिविर संयोजक राधेश्याम ईनाणी ने बताया कि मार्बल एसोसिएशन व नगर प्रशासन पालिका के समन्वित प्रयासों से संचालित इस शिविर में १२०० पशुओं को शरण दिए जाने की व्यवस्था है। इससे पूर्व आर.के. मार्बल्स के सुरेश पाटनी ने पशु शिविर में मौजूद मवेशियों व व्यवस्थाओं का जायजा लिया। कार्यक्रम का प्रारम्भ महेन्द्र पाटनी द्वारा प्रस्तुत मंगलाचरण व श्रेष्ठी कंवरीलाल पाटनी द्वारा किए गए दीप प्रज्ज्वलन से हुआ। गणमान्य नागरिकों ने मुनिश्री को श्रीफल भेंट कर उनकी अभ्यर्थना की।

श्रीमती सुशीला पाटनी
अध्यक्ष, ज्ञानोदय महिला मण्डल
आर.के. मार्बल्स परिवार, मदनगंज किशनगढ

डॉ. शीतलचन्द्र जैन एवं डॉ. सुरेन्द्र जैन 'भारती' महाकवि आचार्य ज्ञानसागर पुरस्कार से पुरस्कृत

आचार्य ज्ञानसागर वागर्थ-विमर्श केन्द्र ब्यावर (राज.) की ओर से दिया जाने वाला 'महाकवि आचार्य श्री ज्ञानसागर पुरस्कार' (राशि ५१०००/-) श्री मज्जिनेन्द्र आदिनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव समिति, अलवर (राज.) के सौजन्य से दि. १८ फरवरी ०३ को ज्ञानकल्याणक महोत्सव के शुभावसर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पर एक भव्य समारोह में पू. क्षुल्लक श्री गम्भीरसागर जी महाराज एवं पू. क्षुल्लक श्री धैर्यसागर जी महाराज के सान्निध्य में जैनदर्शन के प्रमुख अध्येता डॉ. शीतलचन्द जैन, प्राचार्य-आचार्य संस्कृत महाविद्यालय, जयपुर एवं युवा मनीषी डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन भारती' (प्रधानसंपादक-पार्श्वज्योति), बुरहानपुर को क्रमशः छठवें एवं सातवें पुरस्कार से ५१०००/-रु., भव्य प्रशस्तिपत्र, शाल-श्रीफल एवं पुष्पहार भेंटकर पुरस्कृत किया गया।

अ.भा.दि. जैन विद्वत्परिषद् द्वारा विदेशों में जैन साहित्य सम्प्रेषित

अ.भा.दि. जैन विद्वत्परिषद द्वारा श्री पं. अमरचन्द जैन (कोषाध्यक्ष) सतना एवं प्रो. डॉ. नन्दलाल जैन रीवा के संयोजकत्व में परिषद की विदेशों में जैन साहित्य के प्रचार-प्रसार के निर्णय को मूर्तरूप देने के लिए लंदन विश्वविद्यालय, डॉ. के.वी. मरडिया लीड्स यूनिवर्सिटी, डॉ. रान गीब्स चैस्टर कॉलेज, चैस्टर, डॉ. फुजीनागा सिन मियावोनोजो, गियाजावी, जापान, डॉ. क्रिस्टफ एर्यारण, साउथ एशियन इन्स्टीट्यूट, टाइडोमवर्ग, जर्मनी आदि के पुस्तकालयों हेतु जयधवल तथा ज्ञानपीठ से प्रकाशितजैन साहित्य, अध्यात्म अमृत कलश, मल्टी डायमेन्शनल एस्पेक्ट्स ऑफ अनेकान्तवाद, जैनिज्म इन ग्लोबल पर्सपेक्टिव, दी जैन वर्ल्ड ऑफ नान लिविंग, बायोलॉजी इन तत्वार्थसूत्र, जैन कार्मोलॉजी, रिलीजियन एण्ड कल्चर ऑफ जैन्स, सर्वोदयी जैन तन्त्र, ग्लॉसरी आऊफ जैन टर्म्स, आई एम् महावीर, जैन सिस्टम इन नर कौल, बेसिक रैनेट्स ऑफ जैनिज्म, कल्याणमंदिर स्तोत्र (अंग्रेजी), पं. जगन्मोहनलाल शास्त्री साधुवाद ग्रंथ, डॉ. कासलीवाल अभिनन्दन ग्रंथ तथा जीवराज ग्रंथमाला सोलापुर से प्रकाशित साहित्य भेजा गया है। भविष्य में भी इसी तरह मौलिक एवं अंग्रेजी में अनूदित जैन साहित्य भेजे जाने की आवश्यकता एवं योजना है अतः जो भी दानी महानुभाव अपनी ओर से विदेशों में जैन साहित्य भिजवाना चाहते हों वे अपनी सहयोग राशि निम्नलिखित पते पर भिजवाकर सहयोग करें -

डॉ. सुरेन्द्रकुमार जैन, मंत्री अ.भा.दि. जैन विद्वत्परिषद
एल ६५, न्यू इन्दिरानगर, ए, बुरहानपुर (म.प्र.)-४५०३३१
फोन- ०७३२५-२५७६६२

जैन साहित्य मंगवायें

पार्श्व ज्योति कार्यालय में विक्रय हेतु उपलब्ध महत्वपूर्ण स्वाध्यायोपयोगी कृतियाँ मँगवायें- डॉ. रमेशचन्द जैन द्वारा लिखित जैनपर्व (मूल्य-३१ रुपये) श्रावक धर्म (मूल्य-१२ रुपये) उद्बोधन (मूल्य-१२ रुपये), डॉ. सुरेन्द्र जैन 'भारती' द्वारा लिखित-पासणाह चरिउ: एक समीक्षात्मक अध्ययन (मूल्य-५० रुपये), जलगालन विधि और उसका वैशिष्ट्य (मूल्य-१२ रुपये)

डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन 'भारती'
पार्श्व ज्योति कार्यालय, एल. ६५
न्यू इन्दिरानगर, ए, बुरहानपुर

डॉ. सुरेन्द्र जैन 'भारती' एवं श्रीमती इन्द्रा जैन का अभिनन्दन

बुरहानपुर- अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वत् परिषद् के महामंत्री डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन 'भारती' का आचार्य ज्ञानसागर वागर्थ विमर्श केन्द्र, ब्यावर (राज.) द्वारा श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव, अलवर (राज.) में प.पू. मुनि पुंगव श्री सुधासागर जी महाराज, क्षुल्लक श्री गम्भीर सागर जी महाराज एवं क्षुल्लक श्री धैर्यसागर जी महाराज के सान्निध्य में सातवें महाकवि आचार्य ज्ञानसागर पुरस्कार (राशि-५१०००रु.) से पुरस्कृत होने पर स्थानीय पार्श्व ज्योति मंच (राजि.) द्वारा दि. २ मार्च को एक समारोह में डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन 'भारती' एवं उनकी सहधर्मिणी श्रीमती इन्द्रा जैन 'भारती' (प्रकाशिका-पार्श्व ज्योति) का पुष्पहार एवं श्रीफल भेंटकर हार्दिक अभिनन्दन किया गया।

संजय कुमार जैन
कोषाध्यक्ष-पार्श्व ज्योति मंच, न्यू इंदिरा नगर, बुरहानपुर

अनेकान्त ज्ञानमंदिर शोधसंस्थान, बीना (म.प्र.) का ११ वाँ स्थापना समारोह

२० फरवरी १९९२ को स्थापित अनेकान्त ज्ञानमंदिर शोधसंस्थान बीना (सागर) म.प्र. ने २० फरवरी २००३ को संस्थान के संस्थापक ब्र. संदीप 'सरल' के पुनीत सान्निध्य एवं मार्गदर्शन में संस्थान का ११ वाँ स्थापना दिवस समारोह सादगीमय किन्तु उत्साहमय वातावरण में सम्पन्न हुआ।

कार्यक्रम का प्रारम्भ २० फरवरी को प्रातः श्रुतपूजन एवं भक्तामर स्तोत्र पाठ के साथ प्रारम्भ किया गया। दोपहर में २ बजे मंगलाष्टक का सामूहिक मंगलाचरण गान किया गया। तत्पश्चात् ११ महानुभावों ने मंगलदीप प्रज्जवलित किये।

अनेकान्त जैन

विनम्र अनुरोध

कोटि-कोटि मुनियों की निर्वाण स्थली श्री दि. जैन सिद्धक्षेत्र फलहोड़ी बड़ागाँव (धसान) टीकमगढ़ (म.प्र.) (भारत वर्षीय दि. जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटी बम्बई संबद्धता क्र. १२७'') में चंन्देल कालीन श्री १००८ भगवान् महावीर जिनालय का जीर्णोद्धार का कार्य वृहद स्तर पर चल रहा है। स्थानीय क्षेत्रीय समाज के सहयोग से एक तिहाई कार्य पूर्ण हो चुका है, अर्थाभाव में कार्य में अवरोध (व्यवधान) आ रहा है संकल्पित समयावधि पूर्ण होने जा रही है अतः समस्त समाज के उदारहृदय तीर्थभक्तों से विनम्र अनुरोध है कि अपनी चंचला लक्ष्मी का सदुपयोग कर पुण्य लाभ लेते हुए संकल्पित अवधि में ही यह कार्य पूर्णकराकर अनुगृहीत करें। सहयोग राशि एस.बी.आई. कोड ३७११ बड़ागाँव (धसान) खाता नं. ४/१४८५ बी. के नाम से भेजने का कष्ट करें।

दि. जैन सिद्धक्षेत्र फलहोड़ी
बड़ागाँव (धसान) टीकमगढ़ (म.प्र.)

रिसड़ा में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव सानन्द सम्पन्न

कोलकाता- महानगर कोलकाता से बीस किलोमीटर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दूरी पर बसे रिसड़ा उपनगर में नव निर्मित शिखरयुक्त जिन मंदिरजी की वेदी में देवाधिदेव श्री १००८ सुपार्श्वनाथ भगवान् की प्रतिमा जी के प्रतिष्ठापन हेतु पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव का आयोजन पूज्य दिगम्बर जैनाचार्य श्री १०८ वासुपूज्य सागर जी महाराज संघ के सान्निध्य में बाल ब्रह्मचारी, संहितासूरि पं. धर्मचन्द शास्त्री के आचार्यत्व में ३० जनवरी से ६ फरवरी २००३ तक सानन्द सम्पन्न हुआ।

अजीत पाटनी

श्री राजेशकुमार जैन का आकास्मिक निधन

अखिल भारतीय दि. जैन महिला संगठन, एवं राष्ट्रीय जैन महिला संघ एटा की संरक्षिका वयोबृद्ध समाज सेविका श्रीमती नंदन बाई जैन के ज्येष्ठ पुत्र श्री राजेश कुमार जैन 'पप्पू' का लम्बी बीमारी के बाद परन्तु आकस्मिक निधन का समाचार सुनकर एटा जैन समाज में शोक व्याप्त हो गया,।

'वीर कॉम्पलैक्स' वालों के नाम से विख्यात श्री राजेश कुमार जैन धार्मिक विचारों वाले कर्त्तव्य परायण सुशील तथा मृदुभाषी थे। इन्होंने अपने पीछे भरा पूरा परिवार छोड़ा है। अखिल भारतीय दि. जैन महिला संगठन एवं राष्ट्रीय जैन महिला संघ एटा उनके कल्याण की कामना करता है।

बबीता जैन
अध्यक्षा-जैन महिला संगठन राष्ट्रीय संघ

शिक्षण शिविर प्रभावनापूर्वक संपन्न

श्रमण संस्कृति संस्थान सांगानेर के तत्त्वावधान में श्री दिगम्बर जैन संघी मंदिर के प्रांगण में २३ फरवरी से ५ मार्च तक शिक्षण शिविर प्रभावनापूर्वक संपन्न हुआ। शिविर में तत्त्वार्थ सूत्र, द्रव्यसंग्रह, जैन तत्त्वविद्या विषयों का अध्यापन पं. रतन लाल वैनाड़ा एवं ब्र. संजीव भैया कटंगी के निर्देशन में संपन्न हुआ।

शिविर में जयपुर एवं अन्य स्थानों से पधारे शिक्षार्थियों ने भाग लिया। शिविर की आशातीत सफलता और आवश्यकता को देखते हुए आगामी शिविर श्रमण संस्कृति संस्थान सांगानेर में २० जुलाई से ३० जुलाई तक आयोजित होने की घोषणा की गई।

पं. राजेन्द्र कोतमा

शिखरजी में ठहरने का उत्तम स्थान

तीर्थक्षेत्र कमेटी द्वारा गठित आंदोलन समिति द्वारा खरीदी गई नौ हजार वर्ग फुट भूमि पर निर्मित शाश्वत ट्रस्ट भवन व अतिथि आवास व भोजनशाला का झारखंड के राज्यपाल एम.राजा जायस व धर्मस्थल के डॉ. वीरेन्द्र हेगड़े ने संयुक्त रूप से गत शुक्रवार को मधुवन में उद्घाटन कर लोकार्पित किया।

श्री किशोर जैन
वीर सेवा मंदिर, २१ दरियागंज, नई दिल्ली-११०००२

अध्यक्ष धनकुमार जी पाण्डया का आकस्मिक निधन

धर्मपरायण, कर्तव्यनिष्ठ, समाजसेवी, लोहपुरुष बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी स्व. श्री धनकुमार जी पाण्ड्या 'अध्यक्ष' प्रबन्ध कारिणी कमेटी श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र मंदिर संघीजी सांगानेर का आकस्मिक स्वर्गवास दिनांक १७.१.२००२ को हो गया। स्व. आदरणीय श्री धनकुमार जी पाण्ड्या मंदिर संघीजी सांगानेर के आधार स्तम्भ थे।

निर्मल कासलीवाल, मानद मंत्री

जीजोट (नागौर) वेदी प्रतिष्ठा एवं कलशारोहण संपन्न

आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के आशीर्वाद से श्रमण संस्कृति संस्थान सांगानेर से पधारे ब्र. संजीव भैया के कुशल निर्देशन में १२ फरवरी से १४ फरवरी तक वेदी प्रतिष्ठा कलशारोहण का कार्यक्रम धूम धाम के साथ संपन्न हुआ।

संजय पाण्ड्या, जयपुर

कु. नमिता दिनेश कुमारजी गंगवाल को 'रंगरेखा' स्पर्धा में सुवर्ण पदक

'यंग इंडियन्स, मुंबई' संस्था द्वारा आयोजित रंगरेखा चित्रकला स्पर्धा में औरंगाबाद महाराष्ट्र निवासी कु. नमिता दिनेशकुमार जी गंगवाल को सुवर्ण पदक प्राप्त हुआ। इस राष्ट्र स्तरीय स्पर्धा में देशभर से 23 लाख छात्र-छात्राएँ सम्मिलित हुए थे। कक्षा 8 से 10 तक के विभाग में नमिता ने प्रथम क्रमांक प्राप्त किया।

मुंबई में आयोजित समारोह में ज.जे. स्कूल ऑफ आर्ट, मुंबई के प्रो. महाजन एवं प्रो. राउत के करकमलों द्वारा नमिता को सुवर्ण पदक प्रदान किया गया।

कु. नमिता गंगवाल युवा उदयोजक एवं जैन डायमंड टूल्स, औरंगावाद के संचालक, श्री दिनेश कुमार जी पन्नालाल गंगवाल की सुपुत्री, तथा श्री पार्श्वनाथ ब्रह्मचर्याश्रम गुरुकुल एलोरा के संचालक श्री पन्नालाल जी गंगवाल काकाजी की पोती हैं। उन्होंने श्री सरस्वती भवन महाविद्यालय औरंगाबाद से 11 वीं की परीक्षा दी है। इससे पहले भी विविध चित्रकला स्पर्धाओं में कु. नमिता ने अनेक पुरस्कार प्राप्त किये हैं। कु. नमिता का अभिनंदन और शुभेच्छा।

गुलाबचंद्र बोरालकर
समन्तभद्र जैन गुरुकुल एलोरा(औरंगाबाद) महाराष्ट्र

नवोदित विद्वानों का सम्मान समारोह सम्पन्न

श्रमण परम्परा के पोषक व आगम पद्धति से चलनेवाले विद्वानों की न्यूनता को दृष्टिपथ में रखकर पूज्य आचार्य श्री विद्यासागर जी के मंगल आशीर्वाद व मुनिपुंगव सुधासागर जी की पावन प्रेरणा से सन् 1996 में संस्थापित श्री दिगम्बर जैन श्रमण संस्कृति संस्थान ने इस वर्ष 22 नवोदित विद्वानों को आगम का सही ज्ञान प्रदान कर तैयार किया है। दिनांक 5.3.2003 को इन नवोदित विद्वानों को सम्मानित किया गया।

ब्र. भरत जैन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रवेश सूचना

श्रमण परम्परा के उन्नायक आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के शुभाशीर्वाद एवं मुनिपुंगव श्री सुधासागर जी महाराज की मंगल प्रेरणा से संचालित श्री दिगम्बर जैन श्रमण संस्कृति संस्थान सांगानेर का सातवाँ शैक्षणिक सत्र 7 जुलाई 2003 से प्रारम्भ होगा। छात्रों को लौकिक शिक्षा के साथ-साथ धार्मिक संस्कार भी प्रदान किये जाते हैं। यहाँ पर छात्रों को आवास, भोजन व पुस्तकादि की नि:शुल्क व्यवस्था के साथ खेलकूद के लिये विशाल प्रांगण, कम्प्यूटर शिक्षा एवं अंग्रेजी भाषा की प्रवीणता के लिये प्रशिक्षित शिक्षकों की व्यवस्था, प्रतियोगी परीक्षाओं के लिये विशेष दिशा निर्देश की भी सुविधा उपलब्ध है। इच्छुक छात्रों को समय-समय पर विधि विधान, वास्तुविज्ञान एवं ज्योतिष् का भी प्रशिक्षण दिया जाता है।

इसमें सम्पूर्ण भारत से प्रवेश के लिये अधिक छात्र इच्छुक होने से विभिन्न प्रदेशों के लिये स्थान निर्धारित हैं अत: स्थान सीमित हैं। धार्मिक अध्ययन सहित कुल पाँच वर्ष के पाठ्यक्रम में दो वर्षीय उपाध्याय परीक्षा (सीनियर हायर सेकैण्डरी के समकक्ष) माध्यमिक शिक्षा बोर्ड अजमेर से एवं त्रिवर्षीय शास्त्री स्नातक परीक्षा (बी.ए. के समकक्ष) राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय से सम्बद्ध है। जो सरकार द्वारा आई.ए.एस. और आर.ए.एस. जैसी किसी भी सर्वमान्य प्रतियोगिता परीक्षा में सम्मिलित होने के लिये मान्य है।

जिन छात्रों ने 10 वीं की परीक्षा (अंग्रेजी सहित) दी है अथवा उत्तीर्ण कर ली है तथा जो प्रवेश के इच्छुक हैं वे दिनांक 22 मई से 29 मई 2003 तक उक्त संस्थान में चयन हेतु शिविर में उपस्थित होवें। शिविर के पश्चात् चयनित छात्रों को ही प्रवेश मिल सकेगा।

सम्पर्क:-
श्री राजमल बेगस्या (उपाधिष्ठाता)
मो. 5058674, 9414047419
कार्या.- 0141-2730552, 5177300
श्री दि. जैन श्रमण संस्कृति संस्थान
वीरोदयनगर, सांगानेर, जयपुर 303 902 (राज.)

श्रमण संस्कृति आध्यात्मिक शिक्षण शिविर

श्री दिगम्बर जैन श्रमण संस्कृति संस्थान सांगानेर में दिनांक 20 जुलाई से 30 जुलाई तक श्रमण संस्कृति आध्यात्मिक शिक्षण शिविर का आयोजन किया जा रहा है। शिविर में बालबोध, छहढाला, द्रव्यसंग्रह, जैन सिद्धांत प्रवेशिका, करणानुयोगदीपक, तत्त्वार्थसूत्र आदि विषयों का पं. रतनलाल जी बैनाड़ा, डॉ. पं. शीतल चन्द्र जी जयपुर, ब्र. संजीव भैया, ब्र. भरत भैया, डॉ. श्रेयांस कुमार जैन बड़ौत, डॉ. रमेश चन्द्र जी बिजनौर द्वारा अध्यापन कराया जायेगा। इस अवसर पर राष्ट्रीय लब्ध प्रतिष्ठित विद्वानों द्वारा अनेक विषयों पर तत्त्व चर्चा करने का एवं प्रात: सायं प्रवचन का भी लाभ प्राप्त होगा। शिविरार्थियों की भोजन एवं आवास की समुचित व्यवस्था है। अत: अनुरोध है कि धर्मप्रेमी महानुभाव शिविर में पधार कर धर्म लाभ लें। आने की सूचना पत्र द्वारा अवश्य दें।

डॉ. शीतलचन्द्र जैन
निदेशक, कार्यालय- 0141-2730552, 5177300

साहित्याचार्य डॉ. पन्नालाल जैन स्मृति युवा-चिंतक पुरस्कार

डॉ. शीतल जैन जोधपुर को उनके शोध-पत्र ''जीवन दर्शन एवं गुरु-तत्त्व'' पर साहित्याचार्य डॉ. पन्नालाल जैन स्मृति युवा-चिंतक पुरस्कार-2003 अखिल भारतीय दर्शन-परिषद द्वारा पुणे में आयोजित 48 वें अधिवेशन के अवसर पर प्रदान किया गया।

प्रतिवर्ष यह पुरस्कार श्रेष्ठ युवा दार्शनिक के लिये प्रदान किया जाता है। यह तीसरा वर्ष है। यह जानकारी डॉ. एस.पी. दुबे अध्यक्ष अखिल भारतीय दर्शन परिषद एवं अध्यक्ष दर्शन विभाग रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर ने प्रदान की।

डॉ. राजेश जैन
शिशुरोग विशेषज्ञ नमक मण्डी, सागर

डी.एस.पी. विद्यार्थी 'पुलिसमेन ऑफ दि ईयर' से सम्मानित

छतरपुर- राष्ट्रपति शौर्य पदक हेतु चयनित छतरपुर निवासी श्री तुषारकांत विद्यार्थी एस.डी.ओ.पी. डबरा को ग्वालियर विकास समिति ने अपने 25 वें 'टापटेन ऑफ दि ईयर पुरस्कार समारोह' में 'पुलिसमेन ऑफ दि ईयर' के पुरस्कार से सम्मानित किया है। श्री विद्यार्थी को यह पुरस्कार म.प्र. शासन के गृहमंत्री श्री महेंद्र बौद्ध, ग्रामोद्योग मंत्री श्री के.पी. सिंह, विधायक रमेश अग्रवाल, कमिश्नर श्री विमल जुल्की एवं ग्वालियर रेंज के आई. जी. श्री एस.एस. शुक्ला ने प्रदान किया।

राजेश बड़कुल
पूर्व मंत्री जैन समाज, छतरपुर

बड़ौत में पंच कल्याणक प्रतिष्ठा सम्पन्न

उत्तरप्रदेश की धर्म नगरी बड़ौत में जो शिक्षालयों तथा मनोहारी जिनालयों से शोभित है, श्री 1008 अजितनाथ दिगम्बर जैन मंदिर के जिनबिम्बों की प्राण प्रतिष्ठा 5 मार्च से 10 मार्च 2003 तक सम्पन्न हुई। सात शिखरों एवं नौ वेदियों के निर्माण के साथ भव्य गजरथ तथा पालकी का निर्माण भी कुशल कारीगरों द्वारा किया गया है। मंदिर की जमीन से ऊँचाई 108 फुट है तथा शिखर की ऊँचाई 56 फुट है।

नगर एवं क्षेत्र के सातिशय पुण्योदय से परमपूज्य सन्तशिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज का मंगलमय आशीर्वाद एवं उनके सुयोग शिष्यों परमपूज्य मुनि श्री समतासागर जी महाराज, परमपूज्य मुनि श्री प्रमाणसागर जी महाराज, परम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य ऐलक श्री निश्चयसागर जी महाराज, बा.ब्र. राजेन्द्र भैया, बा. ब्र. अन्नुभैया केपावन सान्निध्य का सौभाग्य मिला। पंचकल्याणक की क्रियाएँ ब्र. प्रदीप जी, अशोक नगर, तथा डॉ. श्रेयांस जी, बड़ौत के आचार्यत्व में सम्पन्न हुईं।

पं. सुनील शास्त्री
962, सेक्टर-7 आवास विकास कॉलोनी,
आगरा (उ.प्र.) फोन: 0562-2277092

वेदी प्रतिष्ठा सम्पन्न

डॉ. धन्य कुमार जैन, पूर्व चेयर मेन अवागढ़ द्वारा-मंदिर नसिया जी, कोठी नया बाग, अवागढ़ (जिला-एटा) में, प्रतिष्ठाचार्य श्री शचीन्द्र कुमार ''सौम्य'' मथुरा के सान्निध्य में भव्य वेदी प्रतिष्ठा एवं पंचकल्याणक समारोह सम्पन्न कराया गया।

शिलान्यास एवं भूमिपूजन

श्री दिगम्बर जैन लेखराज नगर कमेटी द्वारा लेखराज नगर, सिविल लाइन्स अलीगढ़ में मंदिर विस्तार हेतु नवीन भूमि खरीदकर उसका शिलान्यास एवं भूमि पूजन, ब्र. श्री राकेश भैया जी के मार्ग दर्शन में दिनांक 22 फरवरी 2003 को सम्पन्न हुआ।

आचार्य श्री विद्यासागर जी ससंघ कुण्डलपुर में

आत्मा का कोई नाम नहीं होता है। जिनबिम्ब के दर्शन से यह ज्ञात होता है कि हमारी आत्मा का स्वरूप छोटा-बड़ा नहीं अपितु सभी का समान है।

उपर्युक्त उद्गार आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज ने कुण्डलपुर के विद्याभवन में आयोजित अपने मंगल प्रवचन में अभिव्यक्त किए। प्रवचन के पूर्व मंगलाचरण नीतू-नीलू जैन ने प्रस्तुत किया, जबकि आचार्य ज्ञान सागर जी महाराज का चित्र अनावरण सोगानी जी हजारी बाग एवं द्वीप प्रज्वलन पवन कुमार, नरेश कुमार, दिल्ली के करकमलों से सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर कुण्डलपुर क्षेत्र कमेटी के अध्यक्ष संतोष सिंघई के साथ अन्य पदाधिकारियों, सदस्यों एवं अनेक स्थानों से आये भक्तों, तीर्थ यात्रियों ने आचार्यश्री को श्रीफल अर्पित किए। आचार्य श्री ने अपने मंगल उद्बोधन में आगे कहा कि अज्ञान से अपने द्वारा अपना दीपक बुझ जाता है, परंतु ज्ञान होने से उसे हवा से बचाया जा सकता है। बड़े-बड़े साधक भी अपनी शारीरिक साधना से आत्मिक साधना करते हैं। गुरु हमें हेय का त्याग एवं उपादेय को ग्रहण करने का प्रकाश प्रदान करते हैं। अच्छे को अच्छा समझो एवं उसकी अच्छाइयों को ग्रहण करो, जो बुरा है, उसकी बुराइयों को वहीं छोड़ दो। यदि दूसरों को शांत करना है तो स्वयं शांत हो जाओ। आज तक हमने खोया है, खोजा नहीं, सभी सामग्री वीतरागता प्राप्ति के लिए है।

कुण्डलपुर में ग्रीष्म कालीन वाचना का शुभारंभ

18 मार्च 2003 को राष्ट्रसंत आचार्य श्री 108 विद्यासागर जी महाराज के ससंघ सान्निध्य में ग्रीष्म कालीन वाचना हेतु मंगल कलश की स्थापना श्री अशोक कामर्शियल दमोह द्वारा की गई। इस अवसर पर उपस्थित अपार जन समुदाय को आचार्यश्री ने अपना मंगल आशीष देते हुए मंगल प्रवचन में कहा कि गुरुओं की वाणी को सुनकर हृदयंगम करना चाहिए, न कि एक कान से सुनकर दूसरे कान से निकालना चाहिए।

स्मरण रहे कि तीर्थ क्षेत्र कुण्डलपुर जी में अतिशययुक्त श्री बड़े बाबा के भव्य मंदिर निर्माण हेतु तीव्रगति से काम चल रहा है, वहीं पहाड़पुर के पत्थरों पर नागर शैली से अभिभूत नक्काशी के साथ दिलवाड़ा के जैन मंदिरों के समकक्ष बनने वाले इस भव्य मंदिर हेतु क्षेत्र कमेटी ने अधिक से अधिक दान राशि देने की धर्मावलंबियों से अपील की है।

प्रवेश सूचना

श्रमण ज्ञानभारती मथुरा

पू.आ. श्री विद्यासागर जी महाराज के आशीर्वाद एवं पू. उपाध्याय श्री ज्ञानसागर जी महाराज की प्रेरणा से श्रमण ज्ञान भारती छात्रावास का शुभारंभ 11 जुलाई सन् 2001 को भ. जंबूस्वामी निर्वाण क्षेत्र, चौरासी, मथुरा में हुआ था। इस छात्रावास में हाईस्कूल पास छात्रों को लिया जाता है। इन छात्रों को मथुरा के कॉलेजों में आर्ट्स एवं कॉमर्स की कक्षाओं में इण्टर में प्रवेश दिलाया जाता है। कॉलेज के समय के अलावा, अन्य समयों में छात्रावास के रहने के काल में इन छात्रों को धार्मिक शिक्षण, पूजा, आरती-सामायिक करना आदि आवश्यक होता है। छात्रावास में प्रथम वर्ष में छहढाला, द्रव्य संग्रह व दूसरे वर्ष में रत्नकरण्ड श्रावकाचार तथा तत्त्वार्थसूत्र एवं इष्टोपदेश का अध्ययन कराया जाता है। छात्रावास का पूरा कोर्स 5 वर्ष का है। शेष 3 वर्षों में इण्टर पास करने के बाद जीवकांड, कर्मकांड, समयसार, पंचास्तिकाय आदि ग्रंथों का क्रम से अध्ययन कराया जायेगा। छात्र को धार्मिक परीक्षा देना तथा अच्छे प्राप्तांक के योग्य परिश्रम करना आवश्यक होता है। छात्रावास में भोजन, आवास, पुस्तकें एवं शिक्षा तथा परीक्षा शुल्क आदि की नि:शुल्क व्यवस्था है।

छात्रावास का मुख्य उद्देश्य देश में जैन विद्वानों की कमी दूर करना है। अत: जो भी छात्र, कॉलेज शिक्षा के साथ धर्म पढ़ने के इच्छुक हों तथा हाईस्कूल के समकक्ष अर्थात् दसवीं कक्षा पास कर चुके हों, वे अपना प्रार्थनापत्र, दसवीं कक्षा के परीक्षाफल के साथ, 20 जून 2003 से पूर्व तक भिजवा दें। प्रार्थनापत्र में पूरा पता तथा फोन नं. अवश्य लिखें व अपना एक फोटो अवश्य संलग्न करें।

वर्तमान में 22 छात्र, छात्रावास में रहकर धार्मिक शिक्षण ले रहे हैं। धार्मिक शिक्षण का कार्य श्रेष्ठि-विद्वान श्री निरंजनलाल जी बैनाड़ा, अधिष्ठाता, पं. जिनेन्द्र शास्त्री जैन दर्शनाचार्य तथा ब्र. अरुण द्वारा संपादित किया जाता है। अन्य विषयों के लिये कुशल शिक्षकों की व्यवस्था भी की जाती है। इस वर्ष कुल 15 छात्र लेने हैं, जिनका चयन योग्यता आदि के आधार पर किया जायेगा। अत: शीघ्रताशीघ्र प्रार्थना पत्र निम्न पते पर भिजवायें।

अधीक्षक,
श्रमण ज्ञान भारती छात्रावास,
श्री 1008 भ. जंबूस्वामी निर्वाण क्षेत्र चौरासी, मथुरा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बोधकथा

चावल के पाँच दाने

राजगृह में धन्य नाम का एक धनी और बुद्धिमान व्यापारी रहता था। उसके चार पतोहुएँ थीं जिनके नाम थे उज्झिका, भोगवती, रक्षिका और रोहिणी।

एक दिन धन्य ने सोचा, मैं अपने कुटुम्ब में सबसे बड़ा हूँ और सब लोग मेरी बात मानते हैं। ऐसी हालत में यदि मैं कहीं चला जाऊँ, बीमार हो जाऊँ, किसी कारण से काम की देखभाल न कर सकूँ, परदेश चला जाऊँ या मर जाऊँ तो मेरे कुटुम्ब का क्या होगा? कौन उसे सलाह देगा, और कौन मार्ग दिखाएगा?

यह सोचकर धन्य ने बहुत-सा भोजन बनवाया और अपने सगे-सम्बन्धियों को निमन्त्रित किया।

भोजन के बाद जब सब लोग आराम से बैठे थे तब धन्य ने अपनी पतोहुओं को बुलाकर कहा, ''देखो बेटियो, मैं तुम सबको धान के पाँच-पाँच दाने देता हूँ। इन्हें सँभालकर रखना और जब मैं माँगू मुझे लौटा देना।''

चारों पतोहुओं ने जवाब दिया, 'पिताजी की जो आज्ञा', और वे दाने लेकर चली गयीं।

सबसे बड़ी पतोहू उज्झिका ने सोचा, ''मेरे ससुर के कोठार में मनों धान भरा पड़ा है, जब वे माँगेंगे कोठार में-से लाकर दे दूँगी।'' और उसने उन दानों को फेंक दिया और काम में लग गयी।

दूसरी पतोहू भोगवती ने भी यही सोचा कि मेरे ससुर के कोठार में मनों धान भरा पड़ा है। उन दानों का छिलका उतारकर वह खा गयी।

तीसरी पतोहू रक्षिका ने सोचा कि ससुर जी ने बहुत-से लोगों को बुलाकर उनके सामने हमें जो धान के दाने दिये हैं, और उन्हें सुरक्षित रखने को कहा है, अवश्य ही इसमें कोई रहस्य होना चाहिए। उसने उन दानों को एक साफ़ कपड़े में बाँध, अपने रत्नों की पिटारी में रख दिया, और उसे अपने सिरहाने रखकर सुबह-शाम उसकी चौकसी करने लगी।

चौथी पतोहू रोहिणी के मन में भी यही विचार उठा कि ससुर जी ने कुछ सोचकर ही हम लोगों का धान के दाने दिये हैं। उसने अपने नौकरों को बुलवाकर कहा, ''जोर की वर्षा होने पर छोटी-छोटी क्यारियाँ बनाकर इन धानों को खेत में बो दो। फिर इन्हें दो-तीन बार निदाई-गुड़ाई करके एक स्थान से दूसरे स्थान पर रोपो, और इनके चारों ओर बाड़ लगाकर इनकी रखवाली करो।''

नौकरों ने रोहिणी के आदेश का पालन किया, और जब हरे-हरे धान पककर पीले पड़ गये, उन्हें एक तेज दाँतिया से काट लिया। फिर धानों को हाथ से मला और उन्हें साफ़ करके कोरे घड़ों को लीप-पोतकर, उन पर मोहर लगाकर कोठार में रखवा दिया। दूसरे साल वर्षा ऋतु आने पर फिर से इन धानों को खेत में बोया और पहले की तरह काटकर साफ करके घड़ों में भर दिया।

इसी प्रकार तीसरे और चौथे वर्ष किया। इस तरह उन पाँच दानों के बढ़ते-बढ़ते सैकड़ों घड़े धान हो गये। घड़ों को कोठारे में सुरक्षित रख रोहिणी निश्चिन्त होकर रहने लगी।

चार वर्ष बीत जाने के बाद एक दिन धन्य ने सोचा कि मैंने जो अपनी पतोहुओं को धान के दाने दिये थे, उन्हें बुलाकर पूछना चाहिए कि उन्होंने उनका क्या किया।

धन्य ने फिर अपने सगे-सम्बन्धियों को निमन्त्रित किया और उनके सामने पतोहुओं को बुलाकर उनसे धान के दाने माँगे।

पहले उज्झिका आयी। उसने अपने ससुर के कोठार में से धान के पाँच दाने उठाकर ससुर जी के सामने रख दिये।

धन्य ने अपनी पतोहू से पूछा कि ये वही दाने हैं या दूसरे?

उज्झिका ने उत्तर दिया, ''पिताजी, उन दानों को तो मैंने उसी समय फेंक दिया था। ये दाने आपके कोठार में से लाकर मैंने दिये हैं।''

यह सुनकर धन्य को बहुत क्रोध आया। उसने उज्झिका को घर के झाड़ने-पोंछने और सफाई करने के काम में नियुक्त कर दिया।

तत्पश्चात् भोगवती आयी। धन्य ने उसे खोटने, पीसने और रसोई बनाने के काम में लगा दिया।

उसके बाद रक्षिका आयी। उसने अपनी पिटारी से धान के पाँच दाने निकालकर अपने ससुर के सामने रख दिये। इस पर धन्य प्रसन्न हुआ और उसे अपने माल-ख़ज़ाने की स्वामिनी बना दिया।

अन्त में रोहिणी की बारी आयी। उसने कहा, ''पिताजी, जो धान के दाने आपने दिये थे, उन्हें मैंने घड़ों में भरकर कोठार में रख दिया है, उन्हें यहाँ लाने के लिए गाड़ियों की आवश्यकता होगी।''

धानों के घड़े मँगाये गये। धन्य अत्यन्त प्रसन्न हुआ। रोहिणी को उसने सब घर-बार की मालकिन बना दिया।

प्रस्तुति - डॉ. जगदीशचन्द्र जैन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रजि.नं. UP/HIN/29933/24/1/2001-TC डाक पंजीयन क्र.-म.प्र./भोपाल /588/2003

भगवान् महावीर का गर्भावतरण

देवेन्द्र कुमार जैन
जिला एवं सत्र न्यायाधीश

आकाश में छा गये रजत मेघ
होने लगी वर्षा
रत्नों की
हर्ष और उल्लास की
विषादयुक्त चेहरों पर
खिलाखिला उठी हँसी
खेतों में झूमकर
गाने लगीं फसलें
वासन्ती बयारें
मलयगंधी हो बह चलीं
कलरव ने भर दिया
अंतरिक्ष का सूनापन।
धूप हुई गुनगुनी
विधु की शीतलता बढ़ी
नक्षत्रों की लकदक ने
बिखेर दिया आनंद आलोक
यत्र तत्र सर्वत्र।
माता के गर्भ में
अंकुरण के पहले ही
छह मास हुआ यह चमत्कार
सावधान
महावीर ले रहे अवतार।

निद्रामग्न त्रिशला ने
देखे जो सोलह स्वप्न
अलस्सुबह विस्मित हो
राजा से किया प्रश्न
सिद्धार्थ ने ज्योतिष से
माँगा जब समाधान
उसने बताया तब
राजा को हर्षित हो
रानी के गर्भ में
आ गये वर्धमान
राजन हो भाग्यवान
धन्य हुआ कुण्डग्राम।
राजा ने खोल दिये
भण्डारों के बंद द्वार
रत्न बँटे धान्य बँटा
अंधियारा कोष घटा
त्रिशला के अंतस में
विराज गई अपूर्व छटा
नव-मासी प्रतीक्षा भी
बन गई सुखद भार।

जे.डी.ई.-1, भगवती नर्सिंग होम के सामने
हरदा (म.प्र.)

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक : रतनलाल बैनाड़ा द्वारा एकलव्य ऑफसेट सहकारी मुद्रणालय संस्था मर्यादित, जोन-I, महाराणा प्रताप नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित एवं सर्वोदय जैन विद्यापीठ 1/205, प्रोफेसर्स कालोनी, आगरा-282002 (उ.प्र.) से प्रकाशित।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org